ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 18 फरवरी 2018

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 18 फरवरी 2018 से 24 फरवरी 2018

फाल्गुन शु.– 03 ● वि० सं०–2074 ● वर्ष 59, अंक 07, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 194 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

ओ.एस.डी.ए.वी. स्कूल में 'मंथन' एवं 'सम्मानांजलि उत्सव' संपन्न

ओ.एस.डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कैथल का वार्षिक उत्सव 'मंथन' एवं 'सम्मानांजलि उत्सव' मनाया गया। इस उत्सव में स्कूल के चैयरमैन व डी.ए.वी. प्रबन्धकर्त्री समिति एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के प्रधान डॉ. पूनम सूरी मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। विद्यालय के मैनेजर श्री जसमेर सिंह नैन व प्रधानाचार्या एवं क्षेत्रीय निदेशिका श्रीमती सुमन निझावन ने मुख्यातिथि व उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मणि सूरी जी का उत्सव में पधारने पर गर्मजोशी से स्वागत किया। मुख्यातिथि को राष्ट्रपति के द्वारा भारत के चौथे सर्वोच्च नागरिक पुरस्कार 'पदमश्री' से सम्मानित किए जाने पर बधाई दी गई तथा उन्हें प्रेम और सम्मान का प्रतीक अभिनन्दन पत्र व स्मृति चिह्न भेंट किया गया।

मुख्यातिथि ने पद्मश्री से सम्मानित किए जाने का श्रेय डी.ए.वी. संस्थाओं के स्टॉफ व विद्यार्थियों की मेहनत को दिया। अपने उद्बोधन 'ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि....' से करते हुए कहा कि हम सबको ईश्वर से यही प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमें बुराइयों के मार्ग से हटाकर अच्छाइयों की ओर ले जाए। उन्होंने छात्रों, अध्यापकों व अभिभावकों को लघु कथाओं के माध्यम से जीवन का संदेश दिया।

शिक्षा के क्षेत्र में ओ.एस.डी.ए.वी. स्कूल के योगदान को प्रशंसनीय बताते हुए मुख्यातिथि ने कहा कि आज यह विद्यालय नित्य नए कीर्तिमान स्थापित करता हुआ शिक्षा मण्डल के आकाश को प्रकाशित कर रहा है।

इस विद्यालय से शिक्षा प्राप्त छात्र राष्ट्र निर्माण में अपना योगदान दे रहे हैं। उन्होंने आर्य समाज व डी.ए.वी. के योगदान को रेखांकित करते हुए कहा कि शिक्षा समाज से अज्ञान, अंधविश्वास व पाखण्डों को दूर करने का काम करती है। नैतिक मूल्यों के साथ–साथ शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारना डी.ए.वी. संस्थाओं का मुख्य उद्देश्य है उन्होंने अपने संदेश में व्यक्तित्व के विकास के लिए भावनाओं के 'त्रिशूल' को जीवन में अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया। उन्होंने कहा कि सकारात्मकता व उन्नत चिंतन के साथ–साथ हंसमुख व्यक्तित्व से युक्त होना चाहिए तभी हम आगे बढ़कर सफलता का वरण कर सकते हैं। विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती सुमन निझावन ने विद्यालय की वार्षिक प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत की। कार्यक्रम का शुभारंभ मुख्यातिथि द्वारा दीप प्रज्ज्वलन व डी.ए.वी. गान के के साथ किया गया। विभिन्न क्षेत्रों में विशेष योग्यता प्राप्त छात्रों को माननीय मुख्यातिथि महोदय ने पुरस्कार देकर सम्मानित व प्रोत्साहित किया। तत्पश्चात् रंगारंग सांस्कृतिक कार्यक्रम में भौतिकता से अध्यात्म की ओर जाने का संदेश दिया गया।

समारोह के अंत में विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती सुमन निझावन ने माननीय मुख्यातिथि महोदय का आभार प्रकट करने के साथ–साथ कार्यक्रम में उपस्थित सभी आदरणीय अतिथियों, अभिभावकों एवं बच्चों का भी आभार प्रकट किया। तत्पश्चात राष्ट्रीय गान के साथ 'मंथन' एवं सम्मानांजलि उत्सव' संपन्न हुआ।

सोहन लाल डी.ए.वी. अम्बाला शहर में यज्ञ प्रतियोगिता

मुख्यातिथि श्री अतुल कोठारी राष्ट्रीय सचिव शिक्षा संस्कृति उत्थान न्यास ने सोहन लाल डी.ए.वी. महाविद्यालय अम्बाला शहर में आयोजित हवन–यज्ञ प्रतियोगिता में प्रतिभागियों का उत्साहवर्धन करते हुए कहा कि इस प्रकार की हवन यज्ञ तथा धार्मिक गतिविधियों से छात्रों में सांस्कृतिक, आध्यात्मिक तथा नैतिक मूल्यों का समावेश होता है। हमारी वैदिक संस्कृति का प्रभाव केवल भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में है। एकाग्रता का महत्व बताते हुए उन्होंने कहा कि एकाग्रता होने पर मन शांत हो जाता है। हमें जीवन में प्रत्येक कार्य को एकाग्रता से करना चाहिए। आज हम अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं से दूर होते जा रहे हैं। हमें मन्त्रों के अर्थ समझने चाहिऐ।

सम्माननीय अतिथि के रूप में स्वामी डॉ. अमृता, संस्थापक, बहन ऋषि आश्रम, पिंजौर और डॉ. वीनू अरोड़ा, नागरिक हस्पताल, अम्बाला शहर पधारे। प्राचार्य डॉ. विवेक कोहली ने बताया कि यह प्रतियोगिता डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजमेंट कमेटी, नई दिल्ली के आह्वान पर हर वर्ष आयोजित की जाती है। इस वर्ष भी पन्द्रह विद्यालयों एवं तीन महाविद्यालयों ने इस प्रतियोगिता में भाग लिया। लगभग 72 छात्र–छात्राओं ने कॉलेज के प्रांगण में हवन यज्ञ किया। सम्पूर्ण कॉलेज का वातावरण यज्ञमय हो गया।

इस अवसर पर श्री जी.एस. चोपड़ा, डी.ए.वी. लोकल मैनेजिंग कमेटी, श्री अनिल गुप्ता सहित अनेक आर्य सज्जन उपस्थित थे।

हंसराज महिला महाविद्यालय जालंधर में संस्कृत कार्यशाला

हंसराज महिला महाविद्यालय जालंधर के संस्कृत विभाग द्वारा दस दिवसीय संस्कृत कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें मुख्यतिथि स्वरूप डॉ. उदयन आर्य, प्राचार्या, गुरु विरजानंद गुरुकुल महाविद्यालय करतारपुर उपस्थित रहे। सम्पूर्ण कार्यक्रम का आयोजन कार्यशाला की संयोजिका संस्कृत विभागाध्यक्षा श्रीमती सुनीता धवन द्वारा सफलतापूर्वक किया गया।

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – **पूनम सूरी**

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 18 फरवरी 2018 से 24 फरवरी 2018

मनोयुजा धी तथा पार्थिव और दिव्य सम्पत्ति

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

त्वं धियं मनोयुजं, सृजा वृष्टिं न तन्यतुः।
त्वं वसूनि पार्थिवा, दिव्या च सोम पुष्यसि।।

ऋग् ९.१००.३

ऋषिः रेभसूनू काश्यपौ। देवता पवमानः सोमः। छन्दः अनुष्टुप्।

● **(सोम)** हे सोम परमेश्वर!, **(त्वं)** तू, **(मनोयुजं)** मन से संयुक्त, **(धियं)** बुद्धि और क्रिया को, **(सृज)** उत्पन्न कर, **(तन्यतुः)** विद्युत्, **(वृष्टिं न)** जैसे वर्षा को उत्पन्न करती है, **(त्वं)** तू, **(पार्थिवा)** पार्थिव, **(दिव्या च)** और दिव्य, **(वसूनि)** ऐश्वर्यों को, **(पुष्यसि)** पुष्ट कर।

● हे सोम परमेश्वर! तुम्हारे अन्दर अपूर्व सर्जनात्मक शक्ति है, तुम सम्पूर्ण चराचर जगत् का ही सर्जन करनेवाले हो। अतः मेरी तुमसे प्रार्थना है कि तुम मेरे अन्दर मनःसंयुक्त 'धी' का सर्जन करो। वैदिक 'धी' में बुद्धि और क्रिया–शक्ति दोनों सम्मिलित हैं। मन का कार्य संकल्प और विचार करना, तथा बुद्धि का कार्य अध्यवसाय या निश्चय करना है। हमारी बुद्धि मनःसयुक्त हो, अर्थात् हम जो कुछ निश्चय करें वह मन से सोच विचार के उपरान्त ही करें, क्योंकि बिना विचारे सहसा किया गया निश्चय प्रायः भ्रान्त होता है। इसी प्रकार हमारी क्रिया भी मनःसंयुक्त हो, अर्थात् हम कर्म भी विचार–पूर्वक ही करें। जैसे विद्युत् मेघ से वृष्टि उत्पन्न करती है, वैसे ही तुम हमारे अन्दर मनःसंयुक्त 'धी' को उत्पन्न करो, 'धी' की वर्षा करो। उस 'धी' की वृष्टि में संस्नात होकर हम अपने अन्दर प्रबोध, चैतन्य, स्फूर्ति, प्रफुल्लता को अनुभव करें।

हे सोम प्रभु! तुम ऐश्वर्यशाली हो। तुम मुझे पार्थिव और दिव्य दोनों प्रकार की सम्पत्ति प्रदान करो। पार्थिव ऐश्वर्यों में हम तुमसे धन–धान्य, पुत्र, पशु, दुग्ध, घृत, वस्त्र, उत्तम गृह, भूमि, खेत, बाग–बगीचे आदि की समृद्धि चाहते हैं। वेद ने गृह–समृद्धि का चित्रांकन करते हुए कहा है कि हमारी चिरकाल तक स्थिर खड़ी रहनेवाली शाला में अश्व हों, गौएँ हों, सूनृता हो, अन्न हो, घृत हो, वत्स हों, कुमार हों, तरूण हों, दूध से भरे घड़े हों, दही के मटके हों। हमारे घरों में तुम ऐसा ही चित्र ला दो। हम समृद्धि–पूर्वक इस प्यारे लोक में हँसते–खेलते, नाचते–गाते दीर्घ जीवन पाते हुए आगे बढ़ें। साथ में तुम हमें दैवी सम्पत् भी प्रदान करो, जिसे भगवद्गीता में अभय, सत्व–संशुद्धि, ज्ञानयोग–व्यवस्थित, दान, दम, यज्ञ, स्वाध्याय, तप, आर्जव, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शान्ति, अपैशुन, भूतदया, अलोलुपत्व, मार्दव, ह्री, अचापल्य, तेज, क्षमा, धृति, शौच, अद्रोह, अतिमानिता का अभाव, इन नामों से परिगणित किया गया है। इन पार्थिव और दिव्य उभयविध ऐश्वर्यों को हमें प्रदान करके तुम सदा इन्हें परिपुष्ट करते रहो, जिससे कभी ये क्षीण न हों, प्रत्युत अधिकाधिक बढ़ते ही जाएँ। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

बोध कथाएँ

● महात्मा आनन्द स्वामी

स्वामी जी ने तीन दृष्टान्त स्वामी दयानन्द सरस्वती, महात्मा हंसराज एवं एक चीनी सन्त का देते हुए कथा सुनाते हुए कहा कि स्वामी दयानन्द स्वयं अकेले मोक्ष प्राप्त कर सकते थे, लेकिन उनका कहना था कि मुक्त होऊँगा तो सबको साथ लेकर, नही तो यह मुक्ति मुझे नहीं चाहिए। इसी प्रकार महात्मा हंसराज ने अपना पूरा जीवन "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" के अनुसार जिया और चीनी सन्त के अनुसार यदि देर तक जीना चाहते हो तो नम्र बनो, कठोर न बनो।

–आगे पढ़ेंगे तीन लघु कथाएँ

मिलकर रहिए! बाँटकर खाइए!

एक चेला था। उसने अपने गुरु से पूछा– "महाराज! संसार में रहने का क्या ढंग है?"

गुरु ने कहा– " अच्छा प्रश्न किया है तूने। एक–दो दिन में उत्तर देंगे। "

दूसरे दिन गुरुजी के पास एक व्यक्ति कुछ फल और मिठाइयाँ लेकर आया। सब वस्तुएँ महात्माजी के सामने रखकर उन्हें प्रणाम किया और उनके पास बैठ गया। महात्माजी ने उस व्यक्ति से बात भी नहीं की। पीठ मोड़ी सब–के–सब फल खा लिए। मिठाई भी खा ली। वह व्यक्ति सोचता रहा –"यह विचित्र साधु है! वस्तुएँ तो सब खा गया, परन्तु मैं जो सब–कुछ लाया हूँ, मेरी ओर देखता भी नहीं।"

अन्त में क्रुद्ध होकर उठा, चला गया। उसके जाने के पश्चात् महात्मा ने चेले से पूछा– "क्यों भाई? क्या कहता था वह व्यक्ति?"

शिष्य ने कहा–"महाराज! वह तो बहुत क्रुद्ध था। कहता था–मेरी वस्तुएँ तो खा लीं, मुझसे बोले भी नहीं!"

महात्मा बोले–"तो सुन! संसार में रहने का यह ढंग सही नहीं। कोई दूसरा ढंग सोचना चाहिए।"

थोड़ी देर पश्चात् एक दूसरा व्यक्ति आया। वह भी फल और मिठाइयाँ ले आया। फल और मिठाइयों को साधु के सामने रखकर बैठ गया।

साधु ने फल और मिठाइयों को उठाया, साथवाली गली में फेंक दिया और उस व्यक्ति से बड़े प्यार और सम्मान के साथ बातें करने लगा–" कहो जी, क्या हाल है? परिवार तो अच्छा है? कारोबार तो अच्छा है? बच्चें ठीक हैं? पढ़ते हैं न? बहुत अच्छा करते हो, उन्हें खूब पढ़ाओ! तुम्हारा अपना शरीर तो ठीक है? मन तो प्रसन्न रहता है? भगवान् का भजन तो करते हो? शरीर अच्छा तो है, चित्त प्रसन्न हो और प्रभु–भजन में मन लगे तो फिर मनुष्य को चाहिए ही क्या?"

इस प्रकार की मीठी–मीठी बातें करता रहा और वह व्यक्ति होंठों–ही–होंठों में कुढ़ता रहा–"यह विचित्र साधु है! मुझसे तो मीठी बातें करता है, मेरी वस्तुओं का इसने अपमान कर दिया; इस प्रकार फेंक दिया, जैसे उसमें विष पड़ा हो।",

वह भी चला गया तो महात्मा ने चेले से पूछा–"क्यों भाई, यह तो प्रसन्न हो गया?"

शिष्य ने कहा–"नहीं महाराज! यह तो पहले से भी क्रुद्ध था। कहता था–मेरी वस्तुओं का अपमान कर दिया!"

महात्मा बोले–"तो सुन भाई! संसार में रहने का यह ढंग भी ठीक नहीं। अब कोई और विधि सोचनी होगी।"

तभी एक सज्जन वहाँ आए। वे भी फल और मिठाई लाए। साधु के समक्ष रखकर बैठ गए। साधु ने बहुत प्यार से उसके साथ बात की। उन वस्तुओं को आस–पास बैठे लोगों में बाँटा। कुछ मिठाई उस व्यक्ति को भी दी, कुछ स्वयं भी खाई। उसके घर–बार और परिवार की बातें करते रहे। उसे सुन्दर कथाएँ सुनाते रहे। जब वह भी गया, तो महात्मा ने पूछा–"क्यों भाई! यह व्यक्ति क्या कहता था?"

शिष्य ने कहा– "यह तो बहुत प्रसन्न था महाराज! आपकी बहुत प्रशंसा करता था। कहता था– ऐसे साधु को मिलकर चित्त प्रसन्न हो गया!"

महात्मा बोले–"तो सुन बेटे! संसार में रहने का सही ढंग यही है।"

शेष पृष्ठ 06 पर ☞

शिवोपासकों को महर्षि दयानन्द सरस्वती का सन्देश

● आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

मनुष्य के जीवन चक्र का व्यवस्थापक **ओ३म्** प्रमुख नामा **ईश्वर** है। यह ईश्वर जड़ चेतन का शासक है, शिव है, कल्याणकारक है, ब्रह्म है, बड़ा है। इस शिव कल्याणकारक, ब्रह्म आदि उपाधि वाले बड़ों की प्राप्ति के लिए बड़े–बड़े प्रयत्न किए जाते हैं, पर्व मनाए जाते हैं।

उन अनेक पर्वों में एक पर्व **शिवरात्रि पर्व** है। यह पर्व अध्यात्म का पर्व माना जाता है। **ओ३म्, विष्णु, शिव** आदि अनेक नाम वाले ईश्वर की उपलब्धि का पर्व प्रसिद्ध है। इस पर्व पर शिव कल्याणकारक, ब्रह्म, परमेश्वर, की उपलब्धि के लिए **दुग्ध, पुष्प अभिषेक, मन्त्रजाप, नर्तन, कीर्तन, गायन, वादन, जागरण** किए जाते हैं और कल्पना के पुल बाँधे जाते हैं कि शिवरात्रि की रात में जैसे पूर्णिमा, अमावस्या के दिन समुद्र का पानी ऊपर उठता है, वैसे ही मनुष्य के अन्दर ऊपर की ओर ऊर्जा उठती है, इस कल्पना में ही शिवभक्त नाचते, कूदते रहते हैं, **पर यह कल्पना असम्भव ही रहती है। बड़े ब्रह्म की प्राप्ति के लिए इन्द्रियसंयम, मनोनिग्रह, आत्मयोजन अपेक्षित होते हैं।**

परमेश्वर की प्राप्ति के निमित्त **वेद, ब्राह्मणग्रन्थ, उपनिषद्, दर्शन, स्मृति** आदि ग्रन्थों में इन अपेक्षित उपायों का ही निर्देश है।

वेदोक्त ईश्वर प्राप्ति का उपाय

ब्रह्म प्राप्ति का उपाय बताते हुए **वेद** में कहा है–

युजे वां ब्रह्म पूर्व्यं नमोभिर्वि श्लोकऽएतु पथ्येव सूरेः।
शृण्वन्तु विश्वेऽअमृतस्य पुत्राऽआ ये धामानि दिव्यानि तस्थुः।। (यजु.11/5)

अर्थात् **श्लोकः** = वेदमन्त्रों के (श्लोक इति वाङ्नाम, निघ.1/11) **नमोभिः** = स्तवन, स्तुति द्वारा, **पूर्व्यम्** = पहले, सदा से ही विद्यमान ब्रह्म, बड़े व्यापक ईश्वर से, **वां युजे** = तुम लोग युक्त होओ, **सूरेः** = विद्वान, ज्ञानी के, **पथ्या इव** = उत्तम व्यवहार के समान, **वि एतु** = प्राप्त होओ, **विश्वे** = सम्पूर्ण, सभी, **अमृतस्य पुत्राः** = मुझ अमर, अविनाशी ईश्वर की उत्तम सन्तानें, **शृण्वन्तु** = सुनें, कि **ये दिव्यानि धामानि** = जो परमेश्वर प्राप्ति के दिव्य मार्ग हैं, उनको, **आ तस्थुः** = प्राप्त करो, उनमें बैठो।

मन्त्र से स्पष्ट है परमेश्वर प्राप्ति का उपाय **श्लोकः नमोभिः** = वेद मन्त्रों का स्तवन, कथन, वन्दन, पठन पाठन है। जो भक्त **श्लोकः नमोभिः** वेद मन्त्रों से परमेश्वर की स्तुति करते हैं, मन्त्रों से उसका जाप करते हैं वे **पूर्व्यम् ब्रह्म** = पहले, सदा से विद्यमान ब्रह्म को प्राप्त करते हैं। वेदोक्त विधि से परमेश्वर का ध्यान करने वाले, **अमृतस्य पुत्राः** = ब्रह्म के अमृत पुत्र कहे जाते हैं।

ब्राह्मणाक्त ईश्वर प्राप्ति का उपाय

ब्रह्म प्राप्ति के वेदोक्त उपाय का ही **ब्राह्मण ग्रन्थ** भी निर्देश करते हैं। ब्राह्मणग्रन्थोक्त वाक्य हैं–

तस्मान्मन्त्रवन्तेव
ब्रह्मौदनमुपेयान्नामन्त्रवन्तमिति ब्राह्मणम्।
(गोप.ब्रा.1/2/16)

अर्थात् **तस्मात्** = इस कारण, **मन्त्रवन्तेव** = मन्त्र वाले को ही, **ब्रह्मौदनम्** = ब्रह्म ज्ञानियो का अन्न, प्राप्य, **उपेयात्** = प्राप्त होवे, **अमन्त्रवन्तम्** = बिना मन्त्र वाले को यह **ब्रह्मौदन** = ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त, **न** = न हो, ऐसा ब्राह्मण ग्रन्थ का कथन है।

गोपथ ब्राह्मण के इस कथन का तात्पर्य है ब्रह्म की प्राप्ति ब्रह्मवाणी = वेद ज्ञान से होती है। ब्रह्म ओदन है, सबका भक्ष्य है, प्रापणीय है। उसे इस उपाय के द्वारा ही प्राप्त करने का उद्यम आवश्यक है।

उपनिषदुक्त ईश्वर प्राप्ति का उपाय

शिव, कल्याणकारक, ब्रह्म बड़े की प्राप्ति का निर्देश करते हुए **उपनिषद्** में कहा है–

प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत्।।
(मुण्ड. उप. 2/2/4)

अर्थात् ब्रह्मप्राप्ति में **प्रणवः** = ब्रह्मवाचक ओ३म् पद, **धनुः** = धनुष, **हि** = और, **शरः** बाण, **आत्मा** = जीवात्मा है, ब्रह्मप्राप्ति का **ब्रह्म** = परमात्मा, **तत् लक्ष्यम्** = उपासक जीव का लक्ष्य, **उच्यते** = कहा गया है, उस लक्ष्य को, **अप्रमत्तेन** = प्रमादरहित होकर, **वेद्धव्यम्** = बींधना चाहिए, और बेधक, **शरवत्** = बाण के समान, **तन्मयः** = उस ब्रह्म लक्ष्य में, **भवेत्** = प्रविष्ट होवे।

मुण्डकोपनिषद् वचन का भाव है कि **ब्रह्म की प्राप्ति ओ३म् पद के जाप से होती है, जो ब्रह्म का मुख्य नाम है।** ब्रह्म प्राप्ति में मनुष्य का आत्मा बाण स्थानी होता है। आत्मा के बिना नियुक्त हुए ब्रह्म प्राप्त नहीं होता। मनुष्य जीवन का लक्ष्य ब्रह्म है, ब्रह्म यदि प्राप्त नहीं हुआ तो जीवन चक्र ऊपर नीचे होता ही रहेगा, आनन्द उपलब्ध नहीं होगा। आनन्द की उपलब्धि के लिए प्रमाद का त्याग भी नितान्त आवश्यक है, प्रमादी व्यक्ति ब्रह्म तक नहीं पहुँच सकता। प्रमाद इतना परे हो जाए, जैसे सन्सनाता हुआ बाण लक्ष्य भूत पदार्थ में प्रविष्ट हो जाता है, वैसे ही निरालसी जीव की आत्मा ब्रह्म लक्ष्य में स्थिर हो जाए।

दर्शनग्रन्थोक्त ईश्वर प्राप्ति का उपाय

योगदर्शनकार पतञ्जलि का निर्देश है ब्रह्म प्राप्ति की स्थिरता **आसनों** के सम्यक् ज्ञान से आती है। सूत्र है–

स्थिरसुखमासनम्।।
(योग द. 2/46)

अर्थात् **आसनम्** = पद्मासन, भद्रासन आदि आसन (**पद्मासनं वीरासनं भद्रासनं स्वस्तिकं दण्डासनं सोपाश्रयं पर्यङ्कं क्रौञ्चनिषदनं हस्तिनिषदनमुष्ट्रनिषदनं समंस्थानं स्थिरसुखं यथासुखं चेत्येवमादीनि,** व्यासभाष्य योगद. 2/46) **स्थिरसुखम्** = स्थिर तथा सुखदायक होते हैं।

यहाँ महर्षि पतञ्जलि ने **आसन** की चर्चा में **स्थिरता** और **सुख** ये 2 विशेष तथ्य निर्देश किए हैं। **स्थिरता का अभिप्राय है** उपासना के समय शरीर के किसी भी अंग का चलना न हो, शरीर के प्रत्येक अवयव निश्चल, गति रहित हों। मच्छर, मक्खी आदि क्षुद्र जन्तु तक के बैठने, खाज, खुजली के होने पर स्थैर्य भंग न हो, शरीर अचल रहे, अन्यथा शरीर के चलने, चंचल होने पर चित्त चंचल हो उठेगा। तो आसन ऐसा हो, जो स्थिरता प्रदान करे। **सुख का तात्पर्य है** ब्रह्म प्राप्ति के निमित्त जो आसन चयन किया है, वह कष्टदायक न हो, पद्मासन आदि आसन ठीक से अभ्यस्त हों, नहीं तो अभ्यास न होने पर घुटने, गर्दन आदि पीड़ा से भर जाएँगे। आसन लगाने का स्थान नीची ऊँची भूमि से रहित हो, भूमि की समता के लिए वस्त्र, गद्दी का उपयोग भी उचित है। आसन लगाने का स्थान एकान्त, पवित्र, शुद्ध वायु वाला भी अपेक्षित है। इतना ही नहीं! युक्त आहार, विहार, शुद्ध आहार, उचित शयन जागरण, शारीरिक श्रम, व्यायाम करना एवं हिंसा, राग, द्वेषादि का परित्याग भी अत्यन्त आवश्यक है।

सुखद आसन बनाने का ज्ञापन करते हुए **पतञ्जलि** आगे कहते हैं–

प्रयत्नशैथिल्यानन्तसमापत्तिभ्याम्।। (योग द. 2/47)

अर्थात् **प्रयत्न शैथिल्य** = शारीरिक चेष्टा को रोकने एवं **अनन्त** = असीमित, सर्वव्यापक परमात्मा में, **समापत्तिभ्याम्** = समापत्ति तादात्म्य भाव द्वारा मन को लगाने से **आसन** = बैठना, स्थिर व सुखद होता है।

कथन का आशय है ब्रह्म की प्राप्ति के लिए हमारी चेष्टाएँ नितान्त दूर हों, उपासक स्थिर हो, उसका मन ईश्वर में रत हो, तभी ब्रह्म प्राप्ति में बैठने की सुखद अनुभूति होती है।

वेदान्तदर्शन में तो अतिस्पष्ट शब्दों में कहा है–

अचलत्वञ्चापेक्ष्य। (वेदा. 4/1/8)

अर्थात् **निश्चलता** की अपेक्षा से ही शास्त्रों में अन्यत्र **ध्यान** शब्द का प्रयोग हुआ है।

तात्पर्य हुआ ब्रह्म प्राप्ति में चञ्चलता, शरीर चेष्टा, घूमना, फिरना, परिक्रमा सब वर्जित हैं, अनुचित हैं।

स्मृतियों में ईश्वर प्राप्ति का उपाय

मनु महाराज ब्रह्म प्राप्ति का उपाय बताते हुए कहते हैं–

स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः।
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः।।
(मनु 2/28)

अर्थात् **स्वाध्यायेन** = वेदत्रयी के पठन पाठन, **व्रतैः** = अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह के पालन, **होमैः** = अग्निहोत्रादि होम, **त्रैविद्येन** = इन 3 ज्ञान, कर्म, उपासना, **इज्यया** = पक्षेष्टि, **सुतैः** = सुसन्तानोत्पत्ति और, **महायज्ञैः** = ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेवयज्ञ व अतिथियज्ञ के करने, **च** = और, **यज्ञैः** = अग्निष्टोमादि यज्ञों के अनुष्ठान से, **तनुः** = शरीर, **ब्राह्मीयम्** = ब्रह्म प्राप्ति के योग्य, **क्रियते** = बनता है।

मनु महाराज के ब्रह्म प्राप्ति के उपायों से अधिगत है कि ब्रह्म की प्राप्ति स्वाध्याय, यज्ञ यागादि, सत्यभाषणादि कार्यों से होती है। पुष्पार्चन, दुग्धार्चन, जलार्चन, भजन, कीर्तन, नर्तन, जागरण से नहीं होती।

शिवरात्रि पर्व सार्थकता

शिवरात्रि पर्व जो अध्यात्म का पर्व है, ईश्वर की उपलब्धि का पर्व है। इस पर्व पर ईश्वर को उपलब्धि के लिए वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषद्, दर्शन, स्मृति ग्रन्थोक्त उपाय ही करने योग्य हैं। इन शास्त्रोक्त उपायों को करने पर ही ब्रह्म, कल्याणकारक, शिवशंकर परमेश्वर की उपलब्धि संभव है, पर्व की सार्थकता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती का शिवरात्रि व्रत

परम्परानुसार महर्षि दयानन्द सरस्वती से भी उनके पिता मान्य कर्षन जी ने भी फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी 1894 संवत् को शिवरात्रि का व्रत कराया था। व्रत के तथाकथित उपदेश भी निर्दिष्ट किए थे। पर उस व्रत में विद्यासागर, व्याकरणसूर्य श्री स्वामी दण्डी विरजानन्द जी के भावी शिष्य महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपनी बुद्धि को विवेक से रहित नहीं किया था, विवेक उनका उद्बुद्ध था। व्रत के ताम झाम, अनुष्ठान निरर्थक हैं, यह उन्होंने अपनी ब्रह्म रत आत्मा से परख लिया था। ब्रह्म की उपासना में कोई भी पदार्थ, कोई भी गति, भ्रमण सब अयथार्थ हैं, यह समझ लिया था। अपनी इस समझ का बोध जन–जन तक पहुँचाने का आजीवन प्रयत्न किया, एतद् विषयक अनेक ग्रन्थ लिखे।

वेद, ब्राह्मणग्रन्थ, उपनिषद्, दर्शन, स्मृतिआदिशास्त्रोक्तउपायोंकोस्वयंअपनाया,

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

पुरुषार्थ और प्रारब्ध

● मनमोहन कुमार आर्य

हमारा जीवन प्रारब्ध की नींव पर बना है और जीवन को सार्थक करने के लिए हमें पुरुषार्थ करना है। हम वेद मार्ग पर चलते हुए ज्ञान प्राप्ति, उपासना व समाजोत्थान के लिए जितने कार्य करेंगे उससे हमारा वर्तमान और भावी जीवन यशस्वी व सुखमय होगा। प्रश्न है कि पुरुषार्थ और प्रारब्ध हैं क्या? इस संबंध में ऋषि दयानन्द जी **'स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश'** में कहते हैं कि पुरुषार्थ प्रारब्ध से बड़ा इसलिए है कि जिस से संचित प्रारब्ध बनते हैं, जिसके सुधरने से सब सुधरते हैं और जिसके बिगड़ने से सब बिगड़ते हैं। इसी से प्रारब्ध की अपेक्षा पुरुषार्थ बड़ा है। ऋषि दयानन्द ने पहली बात यह कही है कि पुरुषार्थ प्रारब्ध से बड़ा है। पुरुषार्थ से संचित प्रारब्ध बनते हैं अर्थात् प्रारब्ध वृद्धि को प्राप्त होते हैं। पुरुषार्थ के सुधरने से सब सुधरते हैं अर्थात् इससे हमारा प्रारब्ध भी सुधरता है। ऋषि ने यह भी कहा है कि पुरुषार्थ के बिगड़ने से सब बिगड़ते हैं अर्थात् प्रारब्ध भी बिगड़ता है। इन्हीं कारणों से पुरुषार्थ प्रारब्ध से बड़ा है। पुरुषार्थ है क्या? पुरुषार्थ सद्कर्मों को कहते हैं। वेदानुकूल सद्कर्मों को पुरुषार्थ कहते हैं। वेदविरुद्ध कार्य भी पुरुषार्थ हो सकता है परन्तु इन अशुभ कर्मों का परिणाम सुखमय न होकर दुःखरूप ही होगा। मत–मतान्तरों की मिथ्या मान्यताओं के आचरण में पुरुषार्थ तो होता है परन्तु इससे हमारा प्रारब्ध सुख रूप न होकर दुःख रूप ही होता है। इसी लिए सभी मनुष्यों को वैदिक धर्म की शरण में आकर श्रेष्ठाचार कर सुख रूप प्रारब्ध में वृद्धि करनी चाहिए। अधिक सद्कर्मों के करने के लिए अधिक पुरुषार्थ अर्थात् श्रम करना होगा जिससे हमारे संचित पुरुषार्थ में भी वृद्धि होगी। इसके लिए यह जानना भी आवश्यक है कि मनुष्य जो कर्म करता है वह क्रियमाण व संचित कर्म होते हैं। क्रियमाण कर्म वह होते हैं जिसका फल करने के साथ व कुछ समय में ही मिल जाता है। दूसरे कर्म संचित कर्म होते हैं जो हमारे प्रारब्ध में जुड़ कर उसमें वृद्धि करते हैं। संचित कर्म व संचित प्रारब्ध से भावी समय अर्थात् परजन्म में हमें उसके अनुरूप जाति, आयु और भोग प्राप्त होते हैं। सद्कर्मों व पुरुषार्थ से बना प्रारब्ध ही हमें मोक्ष तक ले जाता है। यदि हम अपने प्रारब्ध में सद्कर्म रूपी पुरुषार्थ की वृद्धि नहीं करते तो यह हमें दुःख व निम्न योनियों की यात्रा करा सकता है। यह भी जान लें कि प्रारब्ध को ही लोग भाग्य के नाम से भी जानते हैं।

प्रारब्ध व पुरुषार्थ को हम उदाहरण से भी समझ सकते हैं। प्रारब्ध हमारे संचित कर्मों की पूंजी है जिसके अनुरूप सुख व दुःख का भोग हमने कुछ कर लिया और शेष जीवन में भी करेंगे। प्रारब्ध के अनुसार ही हमें यह मानव जन्म मिला है। प्रारब्ध से ही हमारी जाति, आयु व भोग को परमात्मा हमारे जन्म से पूर्व निर्धारित करते हैं। हमारे इस जन्म से पूर्व परमात्मा ने हमारे प्रारब्ध के अनुसार इस मनुष्य जन्म, इसकी आयु व इसमें मिलने वाले सुख व दुःखों का निर्धारण किया है। इसी के अनुसार हमारा जीवन चल रहा है। प्रारब्ध को यदि कर्मों की पूंजी मान लें तो हम जो शुभ व अशुभ कर्म इस मानव जीवन में करते हैं वह उस प्रारब्ध के शुभ व अशुभ कर्मों में संग्रहित होते जाते हैं। प्रारब्ध में यदि सद्कर्मों की अधिकता होती है तो हमें मृत्योपरान्त मनुष्य जन्म मिलता है और यदि हमारे अशुभ कर्म अधिक होते हैं तो हमें पशु व इससे भी निकृष्ट योनियों में जाना पड़ता है जहाँ सुख कम व दुःख अधिक होते हैं। अनादि काल से यह क्रम चला आ रहा है। इसी सिद्धान्त के अनुसार हम अब तक अनन्त बार जन्म ले चुके हैं। संसार में हम जितनी भी योनियाँ देखते हैं, प्रायः उन सभी योनियों में हमारा अनेकानेक बार जन्म हो चुका है। अनेक बार हम मोक्ष में भी रह चुके हैं। परमात्मा हमारे सभी जन्मों व मोक्ष का साथी रहा है और आगे भी रहेगा। हम जितने अधिक शुभ कर्म करते हैं उतना अधिक परमात्मा के निकट होते हैं और बुरे कर्म करने से परमात्मा से हमारी दूरी हो जाती है। यह दूरी देश व काल की नहीं होती। यह ऐसा होता है कि जैसे हमारे किसी बुरे आचरण से हमारे माता, पिता या मित्र नाराज हों तो सामने होकर भी वह हमसे बातें नहीं करते और उपेक्षा का व्यवहार करते हैं। कुछ इसी प्रकार की दूरी परमात्मा से बुरे कर्म करने पर होती है जिससे हमें लाभ नहीं अपितु दुःख की प्राप्ति रूप हानि होती है। अतः हमें सोच विचार कर अपने जीवन में केवल अच्छे कर्मों का ही आचरण करना चाहिए जिससे हमारा प्रारब्ध शुभ कर्मों से भरा हुआ हो और हम वर्तमान व भावी जन्मों में अधिक से अधिक सुखों को प्राप्त हो सकें और ईश्वर की कृपा से मोक्ष की स्थिति में पहुँच कर मोक्ष को भी प्राप्त कर सकें।

प्रारब्ध शुभ और अशुभ कर्मों से बनता है। हम पहले लिख चुके हैं कि मृत्यु के समय यदि मनुष्य के शुभ कर्म आधे से अधिक होते हैं तो मनुष्य जन्म मिलता है। जीवात्मा के शुभ कर्म जितने अधिक होंगे उसी के अनुसार उसका मनुष्य जन्म श्रेष्ठ माता–पिता व परिवेश में होगा ऐसा अनुमान होता है। हम यदि इस जन्म में एक अशिक्षित एवं निर्धन माता–पिता के यहाँ जन्में हैं तो इसका कारण भी हमारा प्रारब्ध ही है। यदि प्रारब्ध इससे अधिक अच्छा होता तो सम्भव था कि हमें ऐसे माता–पिता मिलते जो वेद ज्ञान से युक्त व साधन सम्पन्न हो सकते थे। माता–पिता यद्यपि निर्धन व अशिक्षित थे परन्तु थे दोनों ही धर्मात्मा। उनसे हमें वैसे ही संस्कार मिले। उन्होंने अभावों में रहते हुए भी हमारी शिक्षा व अच्छे संस्कारों का अपनी क्षमता से कहीं अधिक उत्तम प्रबन्ध किया जिसका लाभ हमें यह मिला कि हम कुछ शिक्षित हो गए और आर्यसमाज की शरण में जा पहुंचे जहां हमें आर्यसमाज के विद्वान मित्रों की संगति मिली, हमारा मन प्रवचन व उपदेश सुनने में लगता था, हम आर्यसमाज के बड़े उत्सवों में जाते थे, स्वाध्याय में भी हमारी रुचि थी, हम अन्य वस्तुओं पर धन का व्यय न कर पुस्तकें व पत्र–पत्रिकाओं के क्रयण में वा उनके सदस्य बन कर उनका अध्ययन वा स्वाध्याय करते थे आदि। हमें ज्ञात नहीं कि हमारा पूर्व जन्म व प्रारब्ध एवं संस्कार कैसे थे परन्तु इस जन्म में हम ऋषि दयानन्द, आर्य विद्वानों व आर्यसमाज से जुड़ कर पूर्ण सन्तुष्ट हैं। अन्यों के बारे में भी हमारी ऐसी ही राय है। यह हमने प्रारब्ध व पुरुषार्थ के विषय में कुछ बताने का प्रयत्न किया है।

ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों एवं इतर वैदिक साहित्य का अध्ययन करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि मनुष्यों को वैदिक साहित्य के अध्ययन में रुचि लेनी चाहिए। उसके अनुरूप आचरण करना चाहिए, ईश्वरोपासना एवं यज्ञ आदि यथाशक्ति करने चाहिए और अपने मन को स्वाध्याय व ईश्वर चिन्तन में लगाना चाहिए जिससे अनावश्यक विचार मन में न आएँ। इसके अतिरिक्त परोपकार व दान आदि भी यथाशक्ति करते रहना चाहिए। अच्छे मित्र बनाने चाहिए जो वेद के विद्वान हों, सच्चरित्र हों, सामिष भोजन न करते हों, जिनमें चारित्रिक दोष न हों। ऐसा करने पर हमारा जीवन व कर्म अच्छे हो सकते हैं। यह पुरुषार्थ हमारे प्रारब्ध में गुणात्मक वृद्धि कर हमारे लिए शुभ होगा।

यदि मनुष्य को अपने जीवन का उत्थान व कल्याण करना हो तो उसे वेदों के सर्वोपरि विद्वान महर्षि दयानन्द जी का जीवन चरित्र पढ़ना चाहिए और उनकी चारित्रिक विशेषताओं को अपने जीवन में धारण करना चाहिए। स्वामी श्रद्धानन्द, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, पं. लेखराम, स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, डॉ. आचार्य रामनाथ वेदालंकार आदि आर्य पुरुषों के जीवन चरित्र व साहित्य को पढ़ना चाहिए। इससे पुरुषार्थ की प्रेरणा तो मिलेगी ही, इससे प्रारब्ध भी सुधरेगा व वृद्धि को प्राप्त होगा और हमारा यह जीवन व परलोक निश्चय ही सुधरेगा। इसी के साथ चर्चा को विस्तार न देकर विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

96 चुक्खूवाला–2, देहरादून–248001
मो. 09412985121

☞ पृष्ठ 03 का शेष

शिवोपासकों को ...

दूसरों के हित के लिए **पंचमहायज्ञविधि, संस्कारविधि, सत्यार्थप्रकाश, वेदभाष्य, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका** आदि स्वग्रन्थों में ब्रह्म प्राप्ति के शास्त्रोक्त सप्रमाण उपाय निर्दिष्ट किए। ब्रह्मप्राप्ति की उपाय भूत उपासना का निर्देश करते हुए उन्होंने लिखा है–

इदानीमुपासना कथं रीत्या कर्त्तव्येति लिख्यते–तत्र शुद्ध एकान्तेऽभीष्टे देशे शुद्धमानसः समाहितो भूत्वा, सर्वाणीन्द्रियाणि मनश्चैकाग्रीकृत्य, सच्चिदानन्दस्वरूपमन्तर्यामिनं न्यायकारिणं परमात्मानं सञ्चिन्त्य, तत्रात्मानं नियोज्य च, तस्यैव स्तुतिप्रार्थनानुष्ठाने सम्यक्कृत्वोपासनयेश्वर पुनः पुनः स्वात्मानं संलगयेत्।

उपासनाविषयः, ऋग्वेदादि, पृ. 176

अर्थात् अब उपासना किस विधि से करनी चाहिए, यह विषय लिखा जाता है– **तत्र** = उस ईश्वर की उपासना में शुद्ध, एकान्त, इच्छानुकूल स्थान में बैठकर, मन शुद्ध करके, ईश्वर में समाहित होकर, सभी इन्द्रियों और मन को एकाग्र करके, सत्, चित्, आनन्द स्वरूप वाले अन्तर्यामी व्यापक न्यायकारी परमात्मा का चिन्तन करके अपनी आत्मा को ईश्वर में युक्त करके, उस ईश्वर की ही स्तुति प्रार्थना के अनुष्ठान को भली प्रकार करके उपासना द्वारा ईश्वर में **पुनः पुनः** = बार–बार, **स्वात्मानम्** = अपनी आत्मा को, अपने आप को, **संलगयेत्** = उपासक लगा दे।

शिवोपासकों को महर्षि दयानन्द सरस्वती का सन्देश

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ब्रह्म प्राप्ति के उपाय भत उपासना निर्देश द्वारा सचेत किया है कि कल्याणकारक परमेश्वर ब्रह्म बाह्य साधनों से प्राप्त नहीं होता, इन्द्रियनिग्रह, मनः एकाग्रता, आत्मनियोजन से होता है। परमेश्वर को प्राप्ति को साधना, उपासना के लिए हिलना, डुलना, चलना निष्प्रयोजन कर्म हैं। ब्रह्म की प्राप्ति के लिए तो इन्द्रियसंयम, मनः शुद्धिकरण, एकान्त स्थान, ब्रह्म का स्वरूप ज्ञान परम आवश्यक है। परमेश्वर में स्व आत्मनियोजन अत्यन्त अनिवार्य है। उपासना में, ब्रह्मप्राप्ति में बाह्य साधन बाधक हैं, साधक नहीं।

शिवोपासकों को महर्षि दयानन्द सरस्वती का सन्देश है शिवरात्रि पर्व के इस धूमधाम मय, महोत्सव में परमात्म साधक उचित उपाय ही ग्रहण करने योग्य हैं, बाधक, निरर्थक नहीं।

प्राचार्या– पाणिनि कन्या महाविद्यालय,
वाराणसी–10
सम्पर्क– आचार्या– आर्य कन्या गुरुकुल
शिवगंज सिरोही 307027 (राज.)

कस्मै देवाय हविषा विधेम

● डॉ. सुशील वर्मा

कुछ वर्ष पहले टैलिविजन पर एक धारावाहिक आया करता था ''भारत एक खोज'' जिसमें उपरोक्त मन्त्रांश का अर्थ बोला जाता था– ''किस देवता की उपासना करें हम हवि देकर''। तो क्या पहले भाष्यकारों ने इस अर्थ को ही स्वीकार किया था। यदि ऐसा ही था तो इसका तात्पर्य तो यह है कि हमें ज्ञात ही नहीं कि किस देवता की पूजा उपासना करें हम? ऐसे ही अन्य मन्त्रों के अर्थ हमारे वेदों के प्रति उपहास का विषय रहा। पाश्चात्य विद्वान तो चाहते ही यही थे। इन भाष्यकारों का भाष्य लौकिक संस्कृत पर आधारित रहा अथवा वह उनका भाष्य एक ही विषय पर केन्द्रित रहा। उदाहरण स्वरूप यजुर्वेद का पूरा भाष्य महीधर और उव्वट द्वारा यज्ञ विषयक ही रहा, फिर चाहे उन्हें अश्लील अर्थ ही क्यों न करने पड़े हों। विडम्बना है कि आज भी वही भाष्य मुख्यतः प्रचलित हैं। इसके विपरीत महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा भाष्य आर्य समाजों तक ही सीमित है। स्वामी जी जो वेदज्ञ थे, उच्चकोटि के विद्वान एवं विलक्षण बुद्धि के धनी थे, जिन्होंने बहुत ही मार्मिक, सार्थक एवं सारगर्भित भाष्य प्रस्तुत किए परन्तु अफसोस कि बहुत से विश्वविद्यालयों, कॉलेज आदि सस्थानों में वही दोष सहित सायण, महीधर उव्वट के भाष्य ही पढ़ाए जाते हैं।

उपरोक्त मन्त्रांश के भाष्य के परिपेक्ष में स्वामी जी के दर्शित किए अर्थों पर दृष्टिपात करें तो हमें मालूम होगा कि किस देवता की उपासना करें हम। पहले उन लोगों ने 'क' का अर्थ 'कौन' अथवा 'किसकी' ही किया। स्वामी जी ने प्रमाणित किया कि 'क' का अर्थ ''सुख प्रदाता परमात्मा''। आइए इस मन्त्रांश पर चिन्तन करें। स्वामी जी द्वारा निर्धारित हवन पद्धति में 'स्तुति प्रार्थना एवं उपासना प्रकरण में दूसरा, तीसरा, चौथा एवं पाँचवाँ मन्त्र इस मन्त्रांश को दर्शाता है। स्वामी जी द्वारा प्रदत्त अर्थों पर हम विचार करें। इन चारों मन्त्रों की एक अलग ही व्याख्या है। ऐसी *व्याख्या कभी नहीं की गई।*

दूसरा मन्त्र–यहाँ इस पद का अर्थ स्वामी जी लिखते हैं ''हम लोग सुख स्वरूप शुद्ध परमात्मा के लिए ग्रहण करने योगय योगाभ्यास और अतिप्रेम से भक्ति किया करें। यहाँ पर उन्होंने हवि का अर्थ घृत आज्यम् अथवा सर्पि आदि नहीं किया अपितु यह भाव दिखाया कि उपासक को हृदय का प्यार ही हवि है। उपासना प्रकरण में इस प्रेम से सुन्दर अर्थ क्या होगा? योगाभ्यास उपासक का प्रभु के साथ योग करता है। और यही प्रभु प्राप्ति प्रसंग में सबसे उचित व्याख्या है। इस मन्त्र में उपासक अपना अभिमान दूर करके उस परमात्मा की सत्ता को स्वीकार करता है क्योंकि पहले मन्त्र में मनुष्य जब भद्र की प्रार्थना करता है तो उसके हृदय में अभिमान जागृत हो जाता है कि मैं किसी से क्यूँ माँगूँ परन्तु जब उस परमात्मा का विराट रूप सामने आता है, तो उस प्रभु की सत्ता, सभी का स्वामी, अधिष्ठाता, अपने गर्भ में समस्त ब्रह्माण्ड को समाया हुआ प्रतीत करता है तो उसका अभिमान चूर–चूर हो जाता है। वह कहा उठता है **''कस्मै देवाय हविषा विधेम''** अर्थात् उस सुख स्वरूप शुद्ध आत्मा के प्रति अपने हृदय प्रेम की आहुति, अपनी हवि।

तीसरे मन्त्र में भी यही पद आता है परन्तु यहाँ अलग ढंग से स्वामी जी ने उल्लेख किया'' उस सुख स्वरूप सकल ज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्मा और अन्तःकरण से भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें''।

मनुष्य जब परमात्मा का विराट रूप देखता है, प्रतीत करता है तो वह अभिमान रहित हो जाता है। उसके समझ में आता है कि वह तो तुच्छ नरकीट मात्र ही है क्योंकि वह तो ''आत्मदा बलदा'' है। वही दाता है, वही देने वाला है। उस प्रभु की छाया ही अमृत है अन्यथा मौत ही मौत। उस परमसत्ता के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं, कोई मार्ग नहीं, कोई साधन नहीं।

''तमेव विदित्वात मृत्युमेति नान्यः पन्थाविद्यते यनाय'' उसे समझ आ जाती है कि आत्म ज्ञान की प्राप्ति के लिए आत्मा को आहुत करना आवश्यक है। आज हम पूजा का अर्थ केवल मात्र यही लेते हैं– धूप बत्ती करना, तिलक लगाना, कुछ भौतिक वस्तुएँ भेंट अर्पित करना, आरती करना प्रसाद चढ़ाना आदि, क्या यही पूजा है? सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में स्वामी जी पूजा का अर्थ करते हैं– 'सत्कार'। पूजन नाम सत्कार। पूजा अथवा सत्कार तो जीवित प्राणी का ही किया जा सकता है। उनकी सेवा करना, उनकी सुख सुविधा जुटाना, उनकी आज्ञा का पालन करना। इसलिए जड़ पदार्थों का, मूर्तियों का सत्कार सम्भव नहीं। पौराणिक परम्परा में पंचायतन पूजा अथवा पंच देवपूजा प्रचलित है। जिसमें वे शिव, विष्णु, गणेश, अम्बिका एवं सूर्य की पूजा करते हैं। परन्तु स्वामी जी ने उन्हें जड़ वस्तु माना है। उनके अनुसार पंच देव पूजा का अर्थ है पाँच देवता क्रमशः माता, पिता, आचार्य अतिथि एवं पति के लिए पत्नी और पत्नी के लिए पति हैं। ये पाँचो देवता ही पूजनीय हैं, सत्कार करने योग्य हैं।

इस मन्त्रांश के अर्थ में उन्होंने भक्ति का अर्थ उस परमपिता परमात्मा की आज्ञा पालन के लिए तत्पर रहना किया है। वह आज्ञा पालन केवल मात्र ब्रह्म नहीं अपितु अन्तः करण से भक्ति अर्थात उसी की आज्ञा पालना है, अर्थात् वेदानुकूल मार्ग पर चलने का आदेश। दिखावा मात्र नहीं, अपितु मन बुद्धि द्वारा स्वीकार करते हुए हमेशा तत्पर रहना, कटिबद्ध रहना। तभी यह भक्ति स्वीकार्य है, तभी हवि सार्थक होगी। साधारण जीवन में भी देखा जाए तो शरीर, आत्मा एवं समाज के बल के लिए आत्मिक बल आवश्यक है शारीरिक बल होने पर भी आत्मिक बल के अभाव में मनुष्य बलवान होते हुए भी भीरू एवं कायर होता है और बलवान भी दुर्बल से पराजित हो जाता है इसलिए आत्मा और अन्तःकरण से भक्ति ही वास्तविक स्तुति है।

इसी प्रकार चतुर्थ मन्त्र में स्वामी जी इसी पद का अर्थ अन्य प्रकार से करते हैं। उनकी विलक्षणता देखिए'' उस सुख स्वरूप सकलैश्वर्य के देने हारे परमात्मा की उपासना अर्थात् अपनी सकल उत्तम सामग्री को उसकी आज्ञा पालन में समर्पित करके विशेष भक्ति करें।

इस मन्त्र में मनुष्य को अहसास कराया गया है कि वह प्रभु सब प्राणि मात्र का स्वामी है। उसे पता है कि यह संसार स्थाई निवास नहीं है इसलिए अनित्यता पर विचार कर उसकी उपासना करें। वह समस्त ब्रह्माण्ड का स्वामी है, चर–अचर जगत् का मालिक है उसके लिए **''कस्मै देवाय हविषा विधेम''** का यही अर्थ है कि वह उसकी आज्ञा का पालन करे। केवल पालन ही नहीं अपितु अपनी सकल उत्तम सामग्री को उसकी आज्ञा पालन में समर्पित करके विशेष भक्ति करे। हे उपासक! तू अपनी सकल उत्तम सामग्री को हवि बना ले और उस प्रभु के चरणों मे समर्पित कर दे। प्रश्न यह है कि यह उत्तम सागग्री क्या है? आज्ञा पालन का आदेश तो पहले भी दिया जा चुका है परन्तु यहाँ आज्ञा पालन उत्तम सामग्री के साथ कहा गया है। वास्तव में हमारा शरीर ही उत्तम सामग्री है क्योंकि मनुष्य परमात्मा की उच्चतम कृति है। हमारा उत्तम शरीर यौवनावस्था में ही है, वृद्धावस्था में नहीं। हम कहते हैं कि अभी क्या बुढ़ापे में उस की उपासना कर लेंगे। यौवनावस्था में ही हमें उसकी भक्ति अर्थात् उस की आज्ञा पालन के लिए कटि बद्धता से तैयार होना होगा, सुमार्ग एवं सुपथ ही हमें उस की उपासना के लिए प्रेरित करेगा। अपनी मन बुद्धि की उस से प्रीति करने में तत्पर हो जाएँ। हमारा अर्जित धन (यह भी एक साधन है) भी धर्म की उन्नति का साधन बनें। इसी प्रकार हमारा उच्चतम समय प्रातः काल का है जिसे हम प्रभु भक्ति में लगा दें। अपने उत्कृष्ट ज्ञान को भी विद्या प्रचार प्रसार में लगाएँ। विश्व बन्धुत्व की भावना को जागृत करें। मनुष्य के कल्याण हेतु कार्यरत हों। यही सब कुछ उत्तम सामग्री का प्रयोग है। ईश्वर प्राणिधान करें, अपना सर्वस्व उस प्रभु को अर्पित कर दें तभी हमारी हवि सार्थक है। यही तात्पर्य है ''हविषा विधेम'' का।

अन्त में पंचम मन्त्र पर चिन्तन करें। स्वामी जी ने यहाँ उल्लेख किया है '' हम लोग उस सुखदायक कामना करने के योग्य पर ब्रहम की प्राप्ति के लिए सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करें''। पहले योगाभ्यास और अति प्रेम से (हृदय प्रेम), फिर आत्मा और अन्तःकरण से, तत्पश्चात् अपनी सकल उत्तम सामग्री द्वारा और अब सब सामर्थ्य से उसकी आज्ञा पालन में समर्पित कर विशेष भक्ति का निर्देश। कारण यही है कि वह महासामर्थ्यवान, सबका रक्षक, सुख प्रदाता है, हम उस की उपेक्षा कर ही नहीं सकते क्योंकि वही समस्त ब्राह्मण्ड को धारण करने वाला है, सूर्यादि जो तीक्षण स्वभाव के हैं, पृथ्वी जैसे दृढ़ पदार्थों को धारण करता है वही सब का विधाता है। यही विचार कर के स्वतः कह उठता है ''कस्मै देवाय हविष विघेम''। निर्णय कर लेता है वह उपासक कि सब विकल्प त्याग कर अपने पूर्ण सामर्थ्य से हवि अर्पित करुँगा। हे मानव! यदि तू पूर्ण रूपेण अपने आप को समर्पित कर देगा तो फिर देर नहीं कि वह तेरा सहायक न हो क्योंकि वेद का आदेश है **''न ऋतते श्रान्तस्य सख्याय देवा''**। यहाँ सारांश यही है कि सब सामर्थ्य से भक्ति करें और भक्ति का अर्थ है। उस परमपिता परमात्मा की आज्ञा पालन करना। आज्ञा पालन भी दिखावे के लिए नहीं, आत्मा और अन्तःकरण से। बाहरी तौर पर तो हम यज्ञ भी करते है, दान भी करते हैं, सेवा का आवरण लेकर सेवा भी कर रहे हैं। दान भी करते है, बस सब ऊपर ऊपर से। ये भावनाएँ अन्दर से जागृत हों इसीलिए कहा जाता है **''उद्‌बुध्य स्वाग्ने''**, अपनी अन्तर आत्मा को जागृत करें, अपने अन्तःकरण को जागृत करें, जो भी कार्य करें, परमात्मा की आज्ञानुसार आत्मा के द्वारा, आत्मनिष्ठ हो कर। यही भक्ति है, यही हवि अर्पित करना है और यही है उस सुख स्वरूप, शुद्धपरमात्मा के प्रति समर्पण, यही हैं **''कस्मै देवाय हविषा विघेम''** का वास्तविक अर्थ। धन्य है वह ऋषि देवदयानन्द जिसने हमें यह मार्ग बताया, नमन है उस महान विभूति को, नमन है उस महान वेदज्ञ को।

गली मास्टर मूलचन्द वर्मा
फाजिल्का (पंजाब) 152123
9217832632

जन्म पत्री मिलाना घोर अंधविश्वास

● अशोक जौहरी

जैसा कि शीर्षक से स्पष्ट है हमारे देश में अधिकांश लोग जन्मपत्री के कायल हैं। वे अपने प्रियजनो का विवाह बिना जन्मपत्री मिलाए नहीं करते। इसके अतिरिक्त किसी भी शुभ कार्य करने से पहले शुभ मुहूर्त के बिना नहीं करते। इनकी मानसिकता है कोई भी कार्य बिना शुभ मुहूर्त के न होने से अशुभ होता है। पंडितों पर आँख मूँद कर विश्वास करते हैं। भाग्यवश कोई कुण्डली मिल भी जाए तो वह ढोंगी पण्डित कोई सही भविष्य की गारन्टी नहीं लेता। मैं ऐसे कितने लोगों को जानता हूँ जो इतना पैसा खर्च कर कुण्डली मिलने पर अर्थात 36 में से 24 गुण मिलने पर योग्य वर समझते हैं। इन सब के बाद भी पति–पत्नि सुख पूर्वक रह सकेंगे इसकी कोई गारेंटी नहीं। कई केसों में इन सबके बावजूद भी पति पत्नि को दुखों का सामना करना पड़ता है। आपसी ताल मेल न बैठने से तलाक की भी नौबत आ जाती है। वैदिक काल में इस जन्म कुण्डली को मिलाने का कोई प्रमाण नहीं मिलता। उस समय विजातीय तथा गन्धर्व विवाह भी प्रचलन में था तथा दोनों प्रकार के विवाह मान्य थे। यह दोनों तरह के विवाह आपसी सहमति से हो जाते थे तथा अभिभावकों को भी सहमति की आवश्यकता नहीं थी।

उस समय हमारी सामाजिक व्यवस्था इतनी सुदृढ़ थी। अगर किसी स्त्री का पति लम्बे समय से विदेश में हो तो संतान के इच्छुक पति पत्नि आपसी सहमति से नियोग द्वारा संतान उत्पन्न कर लेते थे। समाज में यह संतान मान्य थी। नियोग द्वारा उत्पन्न संतान बड़ी योग्य व उनको सम्मान से देखा जाता था। अगर कोई ग्रह या नक्षत्र का कुछ असर होता तो वे सुखी न रहते। उस समय लोग ईश्वर में अटूट आस्था रखते थे। उनका मानना था कि कोई ग्रह, नक्षत्र व देवी देवता बिना ईश्वर की मर्जी से कुछ भी नहीं कर सकता था। वे सब ईश्वर के उपासक थे। आप इतना समझिए जिसपर ईश्वर की अनुकम्पा हो उनको ईश्वर कोई दुख नहीं देता। कोई भी देवी देवता व ग्रह नक्षत्र बाल बाँका नहीं कर सकता।

विवाह से सुख प्राप्त हो यह कई बातों पर निर्भर करता है। अगर जन्मपत्री के गुण मिल जाने पर वर कन्या में सभी गुण मिलना मुश्किल है व उनका चरित्र, पति का व्यवसाय तथा उनकी आमदनी व उम्र आदि। पति वर के माता–पिता सुयोग्य या अच्छे कुल के होंगे यह जरुरी नहीं।

वैदिक काल में वर कन्या में आठ साल का अन्तर मान्य था। उस समय लोग निरोगी व स्वस्थ रहते थे तथा संयम से रहते थे। बड़े चरित्रवान थे। आज के युग में लोगों की उम्र कम होती है तथा रोगी भी हो सकते हैं। इस लिए इतना अन्तर मान्य नहीं है।

त्रेता युग में श्री राम का विवाह सीता से गुरु वशिष्ठ ने कराया था और शुभ मुहूर्त तथा 36 के 36 गुण मिले थे तथा विवाह स्वयम्वर द्वारा रचा गया था। इन सब के बावजूद भी सीता जी को दुखों से गुजरना पड़ा था। इस से प्रमाणित होता है कि जन्मकुण्डली व नक्षत्र का कोई स्थान नहीं।

आधुनिक युग में खगोल शास्त्री व वैज्ञानिकों का मानना है कि ग्रह नक्षत्र की चाल मात्र खगोलिक क्रिया है और इसका प्रभाव मनुष्यों पर पड़ता है यह विवाद का विषय है। अतः मेरा मानना है कि ग्रह नक्षत्र की चाल घोर अंधविश्वास है। मेरा आप से अनुरोध है कि पण्डितों के बिछाए जाल में न फँसे। मैं ज्योतिष शास्त्र का विरोधी नहीं हूँ। वैदिक काल में ऋग्वेद में इसका विस्तृत वर्णन मिलता है। उस समय के ऋषियों को गूढ़ ज्ञान था। उस समय बाणभट्ट ऋषि को खगोल शास्त्र की सम्पूर्ण जानकारी थी। उनकी गणना व नक्षत्र, ग्रह की सटीक जानकारी थी। अतः उस समय के ऋषियों की भविष्यवाणी बिलकुल सही होती थी। आजकल के ढोंगी पण्डित दुकान लगाकर बैठे हैं और समाज में गृहचाल नक्षत्र का भय बना रखा है तथा मनमाने पैसे लेकर उन्हें लूटते हैं। ज्योतिष शास्त्र की कोई विशेष जानकारी नहीं होती। मंगल ग्रह, सोम या बुद्ध आदि के नक्षत्रों के गुरु स्थान पर बैठने पर उनको अनिष्ट होने का संकेत देते हैं। पूजा पाठ, गंडा ताबीज़ उनके दिमाग की उपज है। इससे लोगों में इतना भय पैदा करते हैं कि कोई भी व्यवसाय, पढ़ाई लिखाई व विवाह इन सब तरकीबों से ग्रह शान्त हो जाएँगे और मनोवांछित फल मिल जाएगा। पूजा पाठ के नाम पर गंगा स्नान के लिए पण्डित लोग उनसे मोटी रकम वसूल करते हैं तथा स्वयं करने का ठेका लेते हैं। ये धूर्त पण्डित लोगों को ठगते हैं। वास्तव में यह घो अन्धविश्वास है। अतः आपसे मेरा अनुरोध है कि इन पण्डितों के चक्कर में न फँसे। कर्म ही पूजा है। ईश्वर श्रेष्ठ कर्मों से प्रसन्न रहते हैं कोई विकल्प नहीं।

आर्य समाज इन बातों को अविद्या समझता है। वेदों में अविद्या का पालन, शिक्षण, प्रसार व प्रचार घोर पाप है। ईश्वर ऐसे लोगों को घोर दण्ड देता है। आर्य समाज के अनुयाइयों से मेरा अनुरोध है कि वे इस अविद्या के खिलाफ संघर्ष छेड़ दें। लोगों में जागरुकता पैदा करें वेद का पाठ करें व उसका अनुसरण करें। ईश्वर में अगाध आस्था रखें तथा चरित्रवान बने और देश के योग्य नागरिक बनें तथा देश को उन्नतशील व प्रगतिशील बनाने का प्रयास करें।

दयानन्द सरस्वती व अन्य आर्यसमाजियों ने अविद्या के खिलाफ सशक्त आंदोलन छेड़कर अपने प्राणों की बाजी लगाई थी। स्वामी दयानन्द के कारण इन पण्डितों की दुकान बन्द हो गई। वे इनके जानी दुश्मन बन गए और उन्हीं के अनयायी को पैसे देकर उनकी विष देकर हत्या करवा दी। एक महान विभूति संसार से विदा हो गई। मेरे जैसे कई आर्यसमाजियों का विवाह बिना किसी कुण्डली मिलाए हुआ था और वे सभी सुखी हैं। आप इतना ध्यान दें कि देवी देवता केवल आपके सत् कर्मों से प्रसन्न होते हैं तथा उनमें ईश्वर के गुण विद्यमान हैं। कोई भी दुख आपके बुरे कर्मों का नतीजा है। उनको प्रसन्न करने का यही एक तरीका है। वे भी ईश्वर की भाँति न्यायप्रिय हैं। वे किसी को अकारण नहीं सताते। दुख, सुख तो आने जाने हैं। ईश्वर आपसे बहुत प्रेम करता है। उसपर आस्था रखिए और विश्वास कीजिए। आप कोई भी काम काज व पढ़ाई लिखाई विवेक द्वारा कीजिए। घोर परिश्रम ही सफलता की कुंजी है। इसका कोई विकल्प नहीं। ईश्वर आपके प्रयत्नों को व्यर्थ नहीं जाने देगा।

मैं नव वर्ष की आपको शुभ कामनाएँ प्रेषित करता हूँ। आप संकल्प लीजिए आप भी आर्य समाजियों के साथ कंधा से कंधा मिलाकर आंदोलन छेड़ दें और समाज सेवा में लग जाएँ, लोगों में अन्धविश्वास न पनपने दें।

ओम् स्वस्ति, ओम् स्वस्ति, ओम् स्वस्ति,

इन्द्रापुरम, गाजियाबाद
मो. 9899349683

☞ *पृष्ठ 02 का शेष*

बोध कथाएँ...

संसार में रहने का ठीक ढंग यह है कि प्रभु ने जो कुछ दिया है, उसे बाँटकर *खा, त्याग–भाव से भोग और इसके* साथ–ही–साथ भगवान् से प्यार भी कर। उससे बातें कर। उसके नाम का जप कर। उसका ध्यान कर।

सिद्धि का मूल्य–केवल चार आने

स्वामी रामतीर्थ जी के जीवन की एक कथा है। लाहौर छोड़ने के पश्चात् मस्ती की दशा में वे ऋषिकेश से आगे गंगा के किनारे घूम रहे थे। एक दिन एक योगी उन्हें मिला। स्वामी रामतीर्थ ने उनसे पूछा– "बाबा! कितने वर्ष से आप संन्यासी हैं?"

योगी ने कहा– "कोई चालीस वर्ष हो गए।"

स्वामी रामतीर्थ बोले–"इतने वर्षों में आपने क्या–कुछ प्राप्त किया है?"

योगी ने बड़े अभिमान से कहा–"इस गंगा को देखते हो? मैं चाहूँ तो इसके पानी पर उसी प्रकार चलकर दूसरे पार जा सकता हूँ, जैसे कोई शुष्क भूमि पर चलता है।"

स्वामी रामतीर्थ ने कहा–"उस पार से वापस भी आ सकते हैं आप?"

योगी ने कहा–"हाँ! वापस भी आ सकता हूँ।"

स्वामी रामतीर्थ बोले–"इसके अतिरिक्त कुछ और?"

योगी ने कहा–"यह क्या छोटी बात है?।"

स्वामी रामतीर्थ हँसते हुए बोले–"बहुत छोटी–सी बात है बाबा! चालीस वर्ष आपने खो दिए। नदी में नौका भी चलती है। दो आने उधर जाने के लगते हैं, दो आने इधर आने के। चालीस वर्ष में आपने यह प्राप्त किया, जो केवल चार आने खर्च करते किसी भी व्यक्ति को मिल सकता है। तुम अमृत के सागर में गए अवश्य, परन्तु वहाँ से मोती के स्थान पर कंकर उठा लाए।"

ये सब–की–सब सिद्धियाँ ईश्वर–प्राप्ति में विघ्न है; प्रभु दर्शन के मार्ग में रुकावट है केवल सांसारिक सफलता है यह, आत्मा को प्राप्त करने का मार्ग नहीं।

सच्चे गुरु की पहचान

भक्त दादू महाराज एक नगर के बाहर रहते थे। भक्ति से भरे गीत गाते। कोई आ जाए तो उसे भक्ति का उपदेश देते। स्थान–स्थान पर उनकी प्रसिद्धि होने लगी; शहर में भी पहुँची। शहर के कोतवाल भी भक्ति की बातों में कुछ–कुछ रुचि रखते। घोड़े पर बैठे, शहर से चल पड़े कि दादू महराज के दर्शन कर आएँ, उनसे भक्ति का अमृत ले आएँ। परन्तु भक्ति में रुचि रखते हुए भी थे तो वे कोतवाल ही। शहर से बाहर जंगल में पहुँचे। दूर तक चले गए। कहीं कोई दिखाई नहीं दिया। तभी एक व्यक्ति दिखाई दिया। वह मार्ग में लगी काँटेदार झाड़ियों को काटकर सड़क साफ़ कर रहा था। कोतवाल ने रोब से पूछा– "ए! तू जानता है कि महात्मा दादू कहाँ रहते हैं?"

व्यक्ति कार्य में मस्त था; बोला नहीं। कोतवाल क्रुद्ध हो गए। गाली देते हुए बोले–"मैं तेरे बाप का नौकर नहीं। शहर का कोतवाल हूँ। जल्दी बोल।"

उस व्यक्ति ने अबकी बार सुना, आश्चर्य से कोतवाल की ओर देखा, धीरे–से मुस्करा दिया। कोतवाल ने समझा कि यह व्यक्ति ठट्ठा कर रहा है। जिस चाबुक से घोड़े के चला रहे थे, उसी से उस व्यक्ति को पीट डाला। वह व्यक्ति चाबुक खाता रहा, फिर भी मुस्कराता रहा। कोतवाल ने उसे जोर से धक्का दिया। वह व्यक्ति पत्थर पर गिरा। उसके सिर से रक्त बहने लगा। कोतवाल जल्दी में थे।

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

वेदानुशासनम्ः–

आकाश पर उड़ना सीख लिया धरती पर चलना भूल गए

● देव नारायण भारद्वाज

प्राकृतिक छटा से परिपूर्ण एक सुरम्य कालोनी में रहने वाले सेवानिवृत्त वयोवृद्ध प्रोफेसर साहब अपनी वृद्धा धर्मपत्नी के साथ अमेरिका में कार्यरत अपने पुत्र के बुलावे पर पाताल नगरी चले गए। लेखक को पता चला कि कई महीनों के बाद वे अब भारत में अपने घर लौट आए हैं। उनसे मिलने की अभिलाषा जागी, तो उनसे परिचित लोगों ने मना कर दिया; कि अभी उनसे मिलने मत जाइए; क्योंकि वे लगातार सोते ही रहते हैं और अमरीका व भारत में होने वाले रात्रि–दिन की समयावधि का अनुकूलन कर रहे हैं। मुझे उनके कुछ धर्म–शास्त्र एवं साहित्यिक मार्ग दर्शन लेना होता था; और अपने द्वारा सम्पादित 'वयस्वी' पत्रिका भी उन्हें भेंट करनी थी, सो मैं यकायक उनके आवास पर पहुँच गया। उनके पौत्र ने द्वार खोला तो मैं उनके समीप पहुँच गया। उन्होंने बताया कि यहाँ से अमरीका तो वायुयान से गया ही था, वहाँ पहुँचकर पुत्र ने भी हम लोगों को खूब घुमाया। घर से वातानुकूलित गाड़ी से निकले, वायुयान पर चढ़े, दृश्य–दर्शन कर लौट आए। ऊपर ही ऊपर उड़ता रहा, अब हाल यह है कि मैं कठिनाई से द्वार तक तो चल लेता हूँ, और धर्मपत्नी जी तो घर में भी पैरों से चलने में असमर्थ हैं। वास्तव में समयानुकूल की बात उतनी नहीं थी, जितनी बड़ी बात इस दम्पति के न चल सकने की थी। जो प्रोफेसर पूरे महानगर का कईं–कईं बार चक्कर साइकिल से ही लगा लिया करते थे, अब वे कालोनी के मन्दिर से अधिक दूर *की यात्रा नहीं कर पाते हैं।*

यह रही एक घटना इसे यहीं छोड़ते हैं, और अलीगढ़ में ही घटी दूसरी घटना पर आते हैं। यहाँ पर कई कम्पनी विमान उड़ाने का प्रशिक्षण देती हैं। धनीपुर हवाई पट्टी से उड़ान भरने के कुछ ही देर बाद प्राइवेट फ्लाइंग एकेडमी का दो सीट वाला विमान दुर्घटनाग्रस्त होकर खेत में गिर पड़ा। हादसे में नागपुर निवासी मुख्य प्रशिक्षक पायलट की मौत हो गई, जबकि प्रशिक्षु पायलट जो आन्ध्र प्रदेश से आकर यहाँ विमान–वहन परिज्ञान प्राप्त कर रहे थे, गम्भीररूपेण घायल होकर सघन चिकित्सान्तर्गत दिवंगत हो गए। प्रशिक्षणार्थी बड़ी–बड़ी राशियाँ शुल्क रूप में देते हैं, किन्तु सिखाने वाली कम्पनियों पुराने प्रयुक्त विमान क्रय करके उनकी जान जोखिम में डालती रहती हैं। दिन प्रतिदिन रेल, सड़क मार्गों पर भीषण दुर्घटनाएँ होती रहती हैं, तात्कालिक रूप से चीत्कार–हाहाकार शोर सुनाई देते हैं। उच्च प्रतिष्ठित पदाधिकारी–मन्त्रीगण कुछ प्रतिकर की घोषणाएँ करते हैं; जाँच समिति की नियुक्ति कर दी जाती है। शासन–प्रशासन की ओर से कर्त्तव्य की इतिश्री हो जाती है; जबकि भुक्तभोगी उत्तरवर्ती परिवार आजीवन तड़पने को बाध्य हो जाते हैं। जनता को जाँज समितियों की निष्कर्ष आख्याओं का पता चल नहीं पाता हैं, क्योंकि वे तो अपनी कार्यावधि बढ़ाती रहती हैं; तब तक अन्य कई दुर्घटनाओं के दुःखद समाचार सुनकर वह उनमें ही उलझ जाती है। दुर्घटनाओं का कारण तो तत्काल बाद ही जनश्रुतियों से पता चल जाता है; वह और कुछ नहीं मानवीय असावधानी ही होती है; जो जानबूझ कर निम्न स्तरीय अमानक वस्तुओं के प्रयोग के रूप में सामने आती है। इसके मूल में पैसे की लूट ही सामने आती है, जिसे कहते हैं– भ्रष्टाचार। योगगुरु रामदेव एवं तपस्वी अन्ना हज़ारे से अधिक भ्रष्टाचार की अनुभूति राष्ट्र को कौन करा सकता है? और छोटे–बड़े सभी नागरिक इससे त्रस्त हैं। अस्तु इसका बार–बार स्मरण करने से कोई लाभ नहीं।

आइए! पहली घटना और दूसरी घटना को जोड़कर देखें। वह वृद्ध प्रोफेसर पैरों से चलने में भले ही कठिनाई अनुभव करते हों, किन्तु उनका मस्तिष्क पूर्ववत स्वस्थ व कुशाग्र बना हुआ है, किन्तु चलने–फिरने व उड़ान भरने में सक्षम व्यक्तियों तथा संस्थाओं का यदि मस्तिष्क ही विकृत हो गया हो; उनके मस्तिष्क के प्रकाशपुञ्ज को यदि अनाचार–भ्रष्टाचार के काले काले मेघों ने आच्छादित कर लिया हो तो कोई भी दुर्घटना होना साधारण सी बात है। इस प्रकरण में वेद भगवान हमारा प्रशस्त पथदर्शन करते हैं:–

विमानऽएष दिवा मध्यऽआस्तऽआपप्रिवान रोदसीऽअन्तरिक्षम्।
स विश्वाचीरभिचष्टे घृतारीरन्तरा पूर्वमपरं च केतुम।। यजुः 17,59।।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इस मन्त्र के भावार्थ में इस प्रकार लिखा है:– "जो सूर्यलोक ब्रह्माण्ड के बीच स्थित हुआ अपने प्रकाश से सबको व्याप्त कर रहा है, वह इसका अच्छा आकर्षण करने वाला है, ऐसा मनुष्यों को जानना चाहिए।" यह मन्त्र मनुष्यों को "विश्वावसुः" बनकर विमानन की प्रेरणा देता है, जो सब क्रियाओं को नाप–तोलकर करते हों; और सद्ज्ञानपूर्वक व्यवहार करते हों, जिससे उनकी यात्रा प्रभु एवं प्रजाहित के लिए होती है। वे अपने शरीर–तन–मस्तिष्क 'आपप्रिवान'– न्यूनताओं से रहित करके समर्थ बनाते हैं। मस्तिष्क को वेद ज्ञान से, मन (हृदयान्तरिक्ष) को सत्य की निर्मलता से और शरीर को शक्ति से सम्पन्न करते हैं। इस प्रकार वे परा–अपरा अर्थात् लोक एवं पर लोक–दोनों की यात्राएँ सफलतापूर्वक पूर्ण कर लेते हैं। इसके लिए उन्हें अपने माता–पिता–आचार्य आदि के संरक्षण में सहज–सुलभ संस्कार अपनाने पड़ते हैं; उन्हें ठुकराने पर ही व्यक्ति का सिर अहंकार से इतना भारी हो जाता है कि एक दिन उसे धराशायी हो जाना पड़ता है।

वास्तव में धरती पर चलने की एक कला है, जो इस पर चला वही भला है; और जो इससे विचला, मानो वही फिसला हैं। कला बस इतनी है कि हम प्राणिमात्र के साथ सहृदयता का व्यवहार करें। दया, सेवा, उपकार एवं कर्त्तव्य परायणता आदि अपने श्रेष्ठ आभूषणों पर मलिनता की पर्त–दर–पर्त न चढ़ने दें। सोना आदि लम्बे समय तक रखा रहता है वह भी धूमिल हो जाता है। उसकी चमक वापस लाने के लिए स्वर्णवेत्ता को उसे तपाना पड़ता है; किन्तु रोज प्रयोग में आने वाली पीतल इतनी मंज जाती है कि वह सोने से अधिक चमकदार दिखाई देती है। अलीगढ़ के ऐसे ही एक अलंकार से मैं विश्व–परीचित कराना उचित समझता हूँ। यह है नव–युवाओं की एक टोली जिसे 'मानव–उपकार संस्था' के रूप में जाना जाता है। यह आकाश में उड़ने वालों को धरती पर चलना सिखाती है। इसके सामने कोई धर्म–सम्प्रदाय नहीं; प्रत्युत मात्र मानव होता है। जहाँ कोई असहाय पीड़ित रोगग्रस्त मनुष्य मिल जाता है, तुरन्त बिना भेदभाव के उसकी सहायता के लिए टोली पहुँच जाती है। लावारिस मृतकों की अन्त्येष्टि भी उनकी आस्थानुरूप सम्मानपूर्वक कर देती है। एक नवीनतम उदाहरण प्रस्तुत है। एक रात पुलिस वाले मरीज को मेडिकल कॉलेज के पास छोड़ गए। इन्होंने तो लापरवाही बरती ही, मेडिकल कॉलेज के उच्च वेतनभोगी कार्मिकों को भी उस पर दया नहीं आयी। उन्होंने भी उसे बाहर मरने के लिए छोड़ दिया। पत्रकारों के प्रयास से भी उच्च उपाधिधारी चिकित्सकों को उस पर दया नहीं आयी। अन्ततः मानव उपकार संस्था ने उस मरीज को वहाँ से उठाकर जिला अस्पताल में भर्ती करवाया। राष्ट्र की प्रभूत धनराशि के आधार पर अपने मस्तिष्क को ज्ञान के आसमान पर पहुँचाने वाले, इसी प्रकार ऊपर ही ऊपर उड़ते रहते हैं और धरातल का ध्यान उन्हें तब ही आता है; जब वे प्रकृति के प्रकोप से नीचे गिर कर धरती की धूल चाटने को विवश हो जाते हैं?

बात प्रोफेसर दम्पति से प्रारम्भ की थी। वे तो वयोवृद्ध हैं। अब तो युवक–युवती, छात्र–छात्राएँ भी पैदल चलने में रूचि नहीं रखते हैं, प्रत्युत लूटपाट–चोरी–ह्त्या के सहारे वाहनों पर चढ़कर ही फर्राटे से दौड़ते रहते हैं। उनके विचार भी मोबाइल से सातवें आसमान पर मड़राते रहते हैं। धन के बल पर ऊपर ही ऊपर उड़ने वालों को शास्त्र सतर्क करते हुए संकेत करता है:–

सर्वथा धर्ममूलोऽर्थो धर्मश्चार्थपरिग्रहः।
इतरेतरयोर्नीतो विद्धि मेघोदधौ यथा।।
महा. वनपर्व।।

अर्थात् अर्थ का मूल धर्म है और धर्म सिद्ध होता है अर्थ से। जैसे मेघ से समुद्र की पुष्टि होती है और समुद्र से मेघ की पूर्ति। इसी प्रकार धर्म एवं अर्थ को परस्पर आश्रित समझकर जीवन जीने की कला का अनुसरण करने वाले व्यक्ति आकाश में उड़कर भी धरती पर चलना नहीं भूलते हैं, तथा प्रभु एवं प्रजा दोनों के प्यारे बन रहते हैं।

'वरेण्यम्' अवन्तिका (प्रथम)
रामघाट मार्ग, अलीगढ़, उ.प्र.

उत्तर-दक्षिण में आहुतियाँ क्यों?

● रामनिवास 'गुणग्राहक'

यज्ञ और संस्कारों के विविध पक्षों को लेकर कई प्रकार की शकाएँ खड़ी होती हैं। कर्मकाण्ड अपने आप में एक व्यापक विषय है, जिसके सम्बन्ध में तलस्पर्शी ज्ञान पाने के लिए जीवन लगाना पड़ता है। वेदांगों में गण्य कल्प साहित्य की महत्ता बताते हुए लिखा है– **'छन्दः पादौ वेदस्य हस्तौकल्पऽपठ्यते'**– अर्थात् छन्द नामक वेदांग वेद के पाद हैं और कल्प उसके हाथ हैं। सब जानते हैं कि पाँव चलने, गति करने के काम आते हैं तो हाथ रक्षा करने के। इस प्रकार कल्प ग्रन्थ हमारी वैदिक संस्कृति के लिए रक्षा कवच जैसे हैं। कर्मकाण्ड में बिगाड आने का परिणाम हम देख चुके हैं। यज्ञ का एक नाम अश्वर है और गाय का एक नाम अध्न्य है। अश्वर का अर्थ होता है हिंसा रहित और अध्न्य का अर्थ है– न मारने योग्य। कर्मकाण्ड के बिगाड के कारण हिंसा रहित यज्ञ में हमारे तथा कथित आचार्यों ने न मारने योग्य गाय को काटकर डालने का क्रूरतम पाप कई वर्षों तक किया। ऐसे ही जघन्य पापों का कुफल है कि सत्य सनातन वैदिक धर्म और हमारी विश्वाथम संस्कृति नाम शेष होकर रह गई। आवश्यकता इस बात की है कि हम अपने यज्ञों–संस्कारों से सम्बन्धित कल्प साहित्य को सबल बनाएँ, ताकि हमारी संस्कृति की सुरक्षा सुनिश्चित हो सके। आज दुर्भाग्य से आर्यसमाज में भी कर्मकाण्ड की स्थिति निरन्तर बिगड़ती जा रही है। बहु कुण्डीय यज्ञों का पाखण्ड आर्य समाज में खूब फैल रहा है। दैनिक व साप्ताहिक यज्ञों तक में मनमानापन कहीं भी देखा जा सकता है। शास्त्रीय मर्यादा की अनदेखी करके जिसके मन में जो आया कर डाला। शतपथ ब्राह्मण में महर्षि याज्ञवल्क्य लिखते हैं– "एषतमः प्रविशत्येतं वा तमः प्रविशति यत् अपलियात् यज्ञेन प्रसजति" (5.3.2.2) वह अन्धकार में प्रवेश करता है या अन्धकार उसमें प्रवेश करता है जो यज्ञ के अनाधिकारी को यज्ञ में संयुक्त करता है। स्पष्ट है कि महर्षि याज्ञवल्क्य कर्मकाण्ड की विद्या से शून्य लोगों को यज्ञ का आचार्य ब्रह्मा बनाने का सर्वथा निषेध करते हैं। आर्यों को इस पर ध्यान देना चाहिए।

आर्य समाज में यज्ञों के प्रति मनमानापन रुके इस भावना से एक विशेष उपयोगी और प्रेरक प्रकरण प्रस्तुत करने की प्रबल इच्छा है। यजुर्वेद (2.19) में एक आदेश है– 'यज्ञस्य शिवे सन्तिष्ठस्व स्विष्टे में सन्तिष्ठस्व' – हे यजमान तू यज्ञ को शिव शिव और स्विष्ट = सुइष्ट रखने में संलग्न = तत्पर रहा यज्ञ को कल्याणकारी और उत्तम कामनाओं को पूर्ण करने वाला बनाने का प्रयास करना चाहिए। प्रश्न है कि यज्ञ को स्विष्ट व शिव कैसे बनाएँ? यजुर्वेद का ब्राह्मण शतपथ है, शतपथ में ऋषि याज्ञवल्क्य इसका उत्तर देते हुए लिखते हैं– **'यछे यज्ञस्य अन्यून्नतिरिक्तं तच्छिवं, यछै यज्ञस्य अन्यून्नतिरिक्तं तत् स्विष्टम्'** (11.2.3.9)। अर्थात् यज्ञ को न तो न्यून रखना और न अधिक करना ही यज्ञ को शिव और स्विष्ट रखना है। इसे सरल शब्दों में कहें तो हमारे तत्त्वदर्शी ऋषि–महर्षि ने यज्ञ का जो विधान तैयार किया है, उसमें किसी मंत्र वा प्रक्रिया को छोड़े नहीं और उससे बढ़कर मनमाने ढंग से अपनी ओर से कुछ मंत्र अधिक जोड़कर आहुतियाँ न डालें। ऋषियों की मर्यादा का पालन न करने से हमारे यज्ञ व संस्कार आदि अनुष्ठान निष्फल होकर रह जाते हैं। आर्यो! बचो इस मनमानेपन से, हाँ, अगर अधिक आहुतियाँ देने की इच्छा है तो महर्षि दयानन्द गायत्री मंत्र से इच्छानुसार जितनी चाहो उतनी आहुतियाँ देने की बात सत्यार्थ में लिखते हैं। मनमानेपन के लिए यज्ञीय कर्मकाण्ड में कोई स्थान नहीं, ऐसा करोगे तो घाटे में रहोगे।

याज्ञिक मर्यादा के सम्बन्ध में अत्यावश्यक चर्चा करके मूल विषय पर आते हैं कि यज्ञ में पाँच घृताहुतियों के बाद जल सेंचन करके जो चार घृताहुतियाँ आधारवाज्य भागाहुतियों के रूप में दी जाती हैं, उनमें दो उत्तर–दक्षिण में क्यों दी जाती है? इसका उत्तर पाने की दिशा में बढें उससे पूर्व ध्यान रखें कि यज्ञ धर्मानुष्ठान के साथ–साथ अपने आप में एक वैज्ञानिक प्रक्रिया भी है। 'अयन्त इध्म आत्मा...' मंत्र के द्वारा हम जिन प्रजा, पशु और ब्रह्मवर्चस आदि की प्रार्थना करते हैं, इसकी पूर्ति–प्रक्रिया इन चार मंत्रों में प्रकट की है। बीच में जो जल सेंचन विधि है, वह भी एक अनमोल शिक्षा प्रदान करती है। घृताहुतियों द्वारा यज्ञाग्नि को अधिक बढ़ाने निकटस्थ यजमानों को भी तपन की पीड़ा होने लगती है। जल अग्नि का विरोधी है या पूरक है। उग्र होती हुई अग्नि के चतुर्दिक जल डालकर उसे मर्यादित रखने का प्रयास किया जाता है। यजमान अपनी प्रजा–पशु आदि की वृद्धि की प्रार्थना करता है तो जल सेंचन उसके लिए एक शिक्षा है कि जैसे अग्नि अधिक बढ़ने पर निकटस्थ जनों को पीड़ा न दे इसलिए उसे जल सेंचन का मर्यादित करते हैं, वैसे ही ध्यान रखना कि तेरी वृद्धि–समृद्धि निकटस्थ लोगों के लिए दुःखद न हो। समृद्धि पाकर अधिक उग्र न होना शालीनता, सौम्यता व सहृदयता की मर्यादा बनाए रखना। तेरी वृद्धि, तेरी समृद्धि लोगों के शोषण के लिए न होकर पोषण के लिए हो। यह शिक्षा जल सेंचन की है।

उत्तर–दक्षिण में दी जाने वाली आहुतियों पर ध्यान न दें उत्तर में 'अग्नये स्वाहा' और दक्षिण में 'सोमाय स्वाहा' बोलकर आहुतियाँ दी जाती हैं। उत्तरी ध्रुव को धनात्मक बताते हैं और दक्षिणी ध्रुव को ऋणात्मक। उत्तरायण में सूर्य की गति उष्णता व प्रकाशवर्धक होती है, दक्षिणायन में शीतवर्धक। यज्ञवेदी पर यजमान दम्पति जब बैठते हैं तो पुरुष उत्तर दिशास्थ होता है और देवी दक्षिण में। संगति लगाकर देखें तो स्पष्ट हो जाता है कि अग्नि प्रधान पुरुष और सोम गुण प्रधान स्त्री के प्रतीक के रूप में ये दोनों आहुतियाँ है, जिनके सहज संयोग से उत्पन्न प्रजा को दर्शाने के लिए मध्य में – **'प्रजापतये स्वाहा'** की आहुति है। प्रजा से बढ़ने की प्रार्थना प्रजापति होने के रूप में सफल होती है। प्रजापति के बाद– **'इन्द्राय स्वाहा'** का भाव है कि प्रजा के पश्चात पशु, ब्रह्मवर्चस और अन्नादि ऐश्वर्यों के स्वामी होने की दिशा में कदम बढ़ाकर ऐश्वर्य के स्वामी इन्द्र बनें।

ध्यान रखने वाली बात यह है कि इन मंत्रों में अग्नये, सोमाय, प्रजापतये आदि देखकर या प्राणाय, वरुणाय देखकर ऐसा अनुमान न करें कि हम इन नाम वाले विविध देवताओं को आहुतियाँ प्रदान कर रहे हैं। ये सब नाम परमात्मा के भी हैं इसलिए ऋग्वेद में बड़े स्पष्ट शब्दों में कहा है– **"त्वे इत् हूयते हविः"** (1.26.3) अर्थात हे परमात्मन्। हम आपके लिए हवि को आहूत कर रहे हैं। परमात्मा की विविध शक्तियों, विविध स्वरूपों का स्मरण–चिन्तन करते हुए आहुतियाँ देने की प्रभु की विविध कृपा वृष्टियों की अनुभूति होते रहना भी एक बहुत बड़ा लाभ है। इसलिए वेदादेश है– **'अग्निं इन्धानों मनसा धियं सचेत मर्त्यः'** (ऋ. 8.102.22)। हे मनुष्यों! अग्निहोत्र करते हुए अपने मन–बुद्धि को सचेत रखो! मन्त्रोच्चारण करो तो श्रद्धापूर्वक करो, अर्थ चिन्तनपूर्वक करो। ध्यान रखो परमात्मा हमारे निकट है, वह सब सुन रहा है। **'उप प्रियन्तोऽध्वर मंत्रं वोचमाग्नये। आरेऽअस्मैचश्रृण्वते'** (यजु. 3.11)। मंत्र कहता है कि यज्ञ में हम अर्थ ज्ञानपूर्वक मंत्र पाठ करें, क्योंकि विज्ञान स्वरूप, सबका अन्तर्यामी, सर्वत्र विराजमान होकर प्रभु हमें सुनने वाला है। आर्यो! यज्ञ को विधिपूर्वक, श्रद्धापूर्वक, मंत्रों के अर्थज्ञान पूर्वक करेंगे तो ही यज्ञ के पूर्ण लाभों को प्राप्त होंगे। प्रभो हमारा मार्ग प्रशस्त करो– "धियो यो नः प्रचोदयात्"।।

मो. 7597894991

☞ पृष्ठ 06 का शेष

बोध कथाएँ...

उसे वैसे ही छोड़कर आगे चल दिए। कुछ दूर पर जाकर एक और व्यक्ति दूसरी ओर जाता हुआ मिला। उससे बोले–"दादू महाराज कहाँ मिलेंगे? तू जानता है?"

उस व्यक्ति ने कहा–"दादू महाराज तो इसी मार्ग में थे। अभी कुछ देर पूर्व मैं उन्हें देखकर आया हूँ। वे मार्ग में लगी काँटेदार झाड़ियों को काट रहे थे। क्या आपने उन्हें नहीं देखा?"

कोतवाल ने आश्चर्य से कहा–"वे दादू थे?"

पथिक ने कहा–"हाँ।"

कोतवाल घोड़े को मोड़कर दौड़ाते हुए वापस आए। देखा कि दादू ने अपने सिर पर पट्टी बाँध ली है। वैसे ही झाड़ियाँ काट रहे थे। कोतवाल शीघ्रता के साथ घोड़े से उतरे। दादू के चरणों में गिर पड़े। रोते हुए बोले–"क्षमा कर दो महात्मन्! मैं तो आप ही को खोजता फिरता था। मेरी बुद्धि पर परदा पड़ गया, आपको ही पीट डाला। मुझे क्या पता था कि आप ही दादू भगत हैं। आप तो सड़क साफ़ कर रहे थे।"

दादू मुस्कराते हुए बोले–"मैं सड़क ही तो साफ़ करता हूँ। आत्म–दर्शन को जाने वाली सड़क बिल्कुल सीधी है। इस पर जब काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार की कँटीली झाड़ियाँ उग आती हैं, तब लोगों के लिए चलना कठिन हो जाता है। बहुत अधिक झाड़ियाँ उग जायँ तो मार्ग लुप्त हो जाता है। वह आध्यात्मिक संसार की बात है, यह भौतिक संसार की। इस सड़क पर झाड़–झंखाड़ बहुत है। उन्हें दूर कर रहा हूँ, जिससे यात्रियों को कष्ट न हो।"

कोतवाल ने दुःख के साथ कहा–"परन्तु मैं जब आपसे पूछता रहा, तो आपने बताया क्यों नहीं कि आप ही दादू भगत हैं? मुझे क्षमा कर दीजिए, मुझसे बहुत बड़ा पाप हो गया है।"

दादू ज़ोर से हँस पडे; बोले–"कुछ नहीं किया तुमने। एक व्यक्ति एक घड़े को खरीदता है तो उसे भी ठोक–पीटकर देख लेता है। तुम तो जीवन का मार्ग दिखाने वाले गुरु को खोज रहे थे। ठोक–पीटकर देख लिया तो हर्ज़ ही क्या हुआ?"

यह है गुरु का गुण! परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि जिसे आप गुरु बनाना चाहते हैं उसे पीटना शुरु कर दीजिए। ऐसा नहीं, उसके पास बैठकर यह देखिए कि उसे क्रोध आता है या नहीं। यदि क्रोध नहीं आता तो ठीक व्यक्ति है। उसे गुरु बनाओ, परन्तु होश से बनाओं देख–भालकर बनाओ।

क्रमशः

विश्व शान्ति का केवल एक ही मार्ग है "वैदिक मार्ग"

● खुशहाल चन्द्र आर्य

जैसे सत्य एक ही होता है, असत्य अनेकों हो सकते हैं। दो बिन्दुओं को मिलाने वाली रेखा केवल एक ही हो सकती है, टेढ़ी–मेढ़ी अनेकों हो सकती हैं। वैसे ही धर्म भी एक ही हो सकता है बाकी मत, पंथ, सम्प्रदाय अनेकों हो सकते हैं। धर्म वही होता है जो केवल मानव मात्र ही नहीं बल्कि प्राणी–मात्र की भलाई व कल्याण चाहने वाला हो। किसी भी जीव के प्रति अन्याय, पक्षपात व अत्याचार न करता हो। सब प्राणियों का पिता केवल एक ईश्वर ही है, इसलिए जितने भी प्राणी हैं, वे सभी ईश्वर के पुत्र व पुत्रियाँ हैं। पिता अपने सभी पुत्र व पुत्रियों को एक समान ही प्यार करता है, इसलिए जो धर्म ईश्वर–प्रदत्त होगा, वही धर्म सभी प्राणियों का हितकारी व कल्याणकारी होगा। वेद ईश्वर के बनाए हुए हैं, इसलिए वैदिक धर्म यानि वेदों के अनुसार चलने वाला धर्म ही पूर्ण मानव–मात्र का धर्म हो सकता है। बाकी जितने भी धर्म के नाम से प्रचलित मत, पंथ, सम्प्रदाय हैं वे सब किसी न किसी व्यक्ति विशेष द्वारा चलाए गए हैं। मनुष्य एक अल्पज्ञ प्राणी है, वह चाहे कितना भी महान् क्यों न हो, उसके अल्पज्ञ होने के नाते कुछ न कुछ कमी व स्वार्थ जरूर–जरूर रहेगा। वह अपने ही मत वालों को अधिक पसन्द करेगा और दूसरों के मतवालों को कम पसन्द करेगा। यही भेद–भाव लड़ाई–झगड़े की जड़ है और एक–दूसरे को अलग–अलग करती है और दुःख का कारण है। विश्व में जितने भी मत व पंथ हैं वे सभी किसी न किसी व्यक्ति विशेष द्वारा चलाए हुए हैं। जैसे ईसाई मत ईशा ने चलाया था। *मुस्लिम मत मोहम्मद* साहब ने चलाया था, पारसी मत मूसा ने चलाया था, सिख मत गुरुनानक ने चलाया था, जैन मत महावीर स्वामी ने चलाया और बौद्धमत महात्मा बुद्ध ने चलाया था। इन मतों से विश्व का कल्याण कभी नहीं हो सकता इसलिए मतों को मानने से विश्व में सुख व शान्ति कभी भी स्थापित नहीं हो सकती। अब प्रश्न उठता है कि वैदिक धर्म से ही विश्व में सुख–शान्ति कैसे स्थापित हो सकती है? इसके निम्नलिखित मुख्य कारण हैं।

1. वैदिक धर्म सृष्टि के आदि में ईश्वर–प्रदत्त धर्म हैः– मनुष्य में स्वाभाविक ज्ञान कम और नैमित्तिक ज्ञान अधिक। पशु–पक्षियों में स्वाभाविक ज्ञान अधिक और नैमित्तिक ज्ञान बहुत कम होता है स्वाभाविक ज्ञान वह होता है जो जीवन चलाने के लिए आवश्यक होता है, जैसे खाना–पीना, सोना–जागना, उठना–बैठना, रोना–हँसना तथा सन्तान पैदा करना आदि। इन कामों का फल नहीं मिलता धारण ये हर जीव के लिए करने जरूरी हैं। दूसरा ज्ञान है नैमित्तिक ज्ञान, यह सिखाने से सीखा जाता है। यह ज्ञान मनुष्य में अधिक है, इसीलिए मनुष्य सिखाने से सीखता है। बिना सिखाए वह मूर्ख ही बना रहता है। इसीलिए ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में चार वेद जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद हैं, चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा के हृदय में क्रमशः प्रकट किए। वैसे तो चारों वेदों का सन्देश ऋषियों के मुख से सभी उपस्थित स्त्री व पुरुषों ने सुना पर ब्रह्मा ऋषि ने उन चारों वेदों को कण्ठस्थ कर लिया और अपने शिष्यों को तथा अन्य लोगों को सुनाया। और उन लोगों ने अपने पुत्रों व पौत्रों को सुनाया। इस प्रकार यह सुनने और सुनाने की परम्परा चालू हो गई। जब तक कागज, स्याही, दवात, कलम का आविष्कार "पन्ना पूजा" नहीं हुआ और वेद पुस्तकों में लिखा नहीं गया, तब तक यह परम्परा चलती रही। पुस्तकों में लिखे जाने के बाद यह परम्परा प्रायः समाप्त हो गई, पर दक्षिण में अभी तक भी चलती आ रही है। इसलिए वेदों को श्रुति भी कहते हैं जिसका तात्पर्य है सुन–सुन कर सीखना। ईश्वर ने वेदों में मनुष्यों के लिए यही ज्ञान दिया है कि मनुष्य को क्या काम करने चाहिए और क्या काम नहीं करने चाहिए। जिन कामों को करने से मनुष्य, धर्म, अर्थ, काम को धर्मानुसार यानि वेदानुसार करने से इनके फल मोक्ष को प्राप्त कर सकता है जो मानव–मात्र का अन्तिम लक्ष्य है जिसके पाने के लिए ईश्वर जीव को मनुष्य योनि में भेजता है। इसीलिए हम कह सकते हैं कि वैदिक धर्म ही एक ऐसा सच्चा धर्म है जिसके अनुसार चलने से मनुष्य अपने जीवन में स्वयं भी सुखी व प्रसन्न रह सकता है और दूसरों को भी सुखी व प्रसन्न रख सकता है। इसीलिए इसी धर्म को संसार में सुख व शांति स्थापित करने का आधार मानते हैं।

वैदिक धर्म ही प्राणी मात्र से प्रेम रखने की बात कहता है और परस्पर प्रेम से रहने की बात सिखाता है किसी से भी भेद–भाव रखने की बात नहीं सिखाता। कारण, वैदिक धर्म मानव–मात्र का धर्म है। किसी एक जाति, देश या वर्ग का नहीं है। ईश्वर सबका पिता है और यह धर्म इस पिता के द्वारा ही चलाया हुआ है। हम सब उस परम पिता परमात्मा के पुत्र व पुत्रियाँ हैं। पिता अपनी सन्तान का भला व कल्याण करना चाहता है इसीलिए ईश्वर ने हमारे कल्याण के लिए ही वेदों प्रकाश चार ऋषियों के हृदय में किया। वेदों में इतिहास भी नहीं है क्योंकि ये आदि ग्रन्थ हैं। इतिहास बाद में लिखा जाता है।

2. वैदिक धर्म ही प्राणी मात्र से प्रेम रखने की बात कहता है और परस्पर प्रेम से रहने की बात सिखाता है किसी से भी भेद–भाव रखने की बात नहीं सिखाता। कारण, वैदिक धर्म मानव–मात्र का धर्म है। किसी एक जाति, देश या वर्ग का नहीं है। ईश्वर सबका पिता है और यह धर्म इस पिता के द्वारा ही चलाया हुआ है। हम सब उस परम पिता परमात्मा के पुत्र व पुत्रियाँ हैं। पिता अपनी सन्तान का भला व कल्याण करना चाहता है इसीलिए ईश्वर ने हमारे कल्याण के लिए ही वेदों प्रकाश चार ऋषियों के हृदय में किया। वेदों में इतिहास भी नहीं है क्योंकि ये आदि ग्रन्थ हैं। इतिहास बाद में लिखा जाता है।

3. वेदों में न कुछ कोई कुछ घटा सकता है और न कोई पूछ बढ़ा सकता है इसलिए यह पूर्ण ज्ञान है और पूर्ण ज्ञानवान ईश्वर द्वारा प्रदत्त है। बाकी हमारे धार्मिक ग्रन्थ रामायण, महाभारत, मनुस्मृति आदि में पहले ब्राह्मणों ने अपने स्वार्थ के लिए काफी मिलावट कर दी है परन्तु वेदों में ये स्वार्थी ब्राह्मण कोई मिलावट नहीं कर पा रहे हैं उनको सस्वर बोलने में चढ़ाव–उतराव इस किस्म से है जिसके बोलने से मिलावट पकड़ी जाती है इससे वे मिलावट नहीं कर पाते इसलिए वह ईश्वरीय ज्ञान आज भी हमारे पास ज्यों का त्यों है। इस अद्वितीयता से यह सिद्ध भी होता है कि यह वेद ज्ञान ईश्वर का है।

4. मानव–मात्र का धर्म वही हो सकता है जो सृष्टि के आरम्भ से चला हो। बाद में चला हुआ धर्म, मानव–मात्र का नहीं हो सकता है। उस धर्म के चलने से पहले भी कोई धर्म माना जाता होगा। बाद में किसी व्यक्ति द्वारा चलाया हुआ धर्म, धर्म न होकर कोई मत, पंथ व सम्प्रदाय ही है जो वर्ग विशेष द्वारा माना जाता है।

5. वेद किसी देशीय भाषा में नहीं हैं, वेद संस्कृत भाषा में है जो सब भाषाओं की जननी है और सृष्टि के आरम्भ की भाषा है। अन्य धर्म ग्रन्थ किसी देशीय भाषा में हैं, इसलिए वह मानव–मात्र का धर्म नहीं हो सकता।

6. वेद प्रकृति के अनुसार है, वेदों में प्रकृति के विरूद्ध कोई बात नहीं है। जैसे एक व्यक्ति इतना योगी, तपस्वी व पहुँचा हुआ संन्यासी है जो एक समय में मुम्बई, कलकत्ता, मद्रास व दिल्ली दिखाई देता है। यह बात प्रकृति के विरूद्ध है। एक व्यक्ति एक समय में एक ही जगह दिखाई देगा। मनुष्यों द्वारा चलाए गए मत व पंथों में अपना चमत्कार दिखाने के लिए प्रकृति के विरूद्ध बातें बतलाते हैं जैसे ईसाई लोग कहते हैं कि ईशा की शरण में आ जाओ तुम्हारे सब पाप धुल जाएँगे और मोक्ष के अधिकारी बन जाओगे। मुस्लिम भाई कहते हैं कि मोहम्मद साहब ने चिटली ऊँगली से चाँद के टुकडे कर दिए। पौराणिक भाई इस मामले में सबसे आगे हैं। वे तो कहते हैं कि हनुमान जी ने बचपन में सूर्य को मुख में रख लिया, कुन्ती को कर्ण कान से हुआ था, भगवान कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत को चिटली ऊँगली से उठा लिया। यह सब काम प्रकृति विरूद्ध हैं इसलिए ये सब असम्भव हैं। इसलिए यह सब अन्धविश्वास है। वैदिक धर्म इन सब बातों को नही मानता। ये धर्म केवल बुद्धि, तर्क व विज्ञान सम्मत हैं, उसी बात को मानता है। जिसे हर व्यक्ति को मानना चाहिए जो यथार्थ है।

180, महात्मा गांधी रोड़ (दो तल्ला),
कलकत्ता–700007
मो. 9830135794
फोन नं. 22183825 (033)

पत्र/कविता

महर्षि दयानन्द बोध दिवस का महत्त्व

आई है शिवरात आर्यो! ऋषि की याद दिलाने को।
स्वामी दयानन्द आए थे, वैदिक नाद बजाने को।।
सत्य सनातन वेद धर्म को, भूल गए थे नर–नारी।
अविद्या रूपी अंधकार में, भटकी थी दुनियां सारी।।
छुआ–छूत की, ऊंच–नीच की, फैल गई थी बीमारी।
ईश्वर पूजा बिसरा दी थी, पत्थर पूजा थी जारी।।
भटक रहे थे नर–नारी, ईश्वर के दर्शन पाने को।
स्वामी दयानन्द आए थे, वैदिक नाद बजाने को।।
पनप गई थी फूट भयंकर, फैला था मतवाद यहां।
छोटी–छोटी बातों पर, होती थी रोज फसाद यहां।।
समझदार कम थे, ज्यादा थी मूढ़ों की तादाद यहां।
इसीलिए तो यवन ईसाई, पापी थे आबाद यहां।।
तरस रही थी आर्यवर्त की, जनता दाने–दाने को।
स्वामी दयानन्द आए थे, वैदिक नाद बजाने को।।
ऋषियों–मुनियों के भारत में, गऊएं मारी जाती थीं।
लाखों विधवाएं बेचारी, हाय–हाय डकराती थी।।
बाल–विवाह–अनमेल विवाह की, प्रथा थी तब जोरों पर।
धर्म–कर्म की जिम्मेदारी, थी पाखण्डी चोरों पर।।
भूल गए थे नर–नारी, अपने इतिहास पुराने को।
स्वामी दयानन्द आए थे, वैदिक नाद बजाने को।।
ईश्वर कृपा से भारत में, स्वामी दयानन्द आए।
किया वेद प्रचार रात–दिन, कभी न ऋषिवर दहलाए।।
गऊ, नारी को पूज्य बताया, निर्बल–निर्धन अपनाए।
"अंग्रेजों को मार भगाओं", भारत वासी समझाए।।
"पराधीनता पाप जगत में", आए थे समझाने को।
स्वामी दयानन्द आए थे, वैदिक नाद बजाने को।।
आज करोड़ों पाखण्डी, इस देव भूमि में घूम रहे।
ऊंचे–ऊंचे भवन ठगों के, आसमान को चूम रहे।।
ईश्वर पूजा छुड़वाकर, अपनी पूजा नित करा रहे।
ईश्वर से है गुरु बड़ा, भोली जनता को डरा रहे।।
वेद सभ्यता–संस्कृति को, फिरते दुष्ट मिटाने को।
स्वामी दयानन्द आए थे, वैदिक नाद बजाने को।।
जगत गुरु ऋषि दयानन्द के, वीर सैनिको, जागो तुम।
करो परस्पर मेल, आर्यो! कलह–फूट को त्यागो तुम।।
करो वेद प्रचार जगत में, अविद्या रूपी तिमिर हरो।
लेखराम श्रद्धानन्द बनकर, मित्रो! परोपकार करो।।
"नन्दलाल निर्भय" चौंका दो, वीरो! सकल जमाने को।
स्वामी दयानन्द आए थे, वैदिक नाद बजाने को।।

पं. नन्दलाल 'निर्भय' भजनोपदेशक
ग्राम पो. बहीन, पलवल (हरियाणा)
मो. 9813845774

आखिर जनता कब समझेगी?

भाषणबाजी और लफ्फाजी के चलते हमारी राष्ट्रीयता का ह्रास हो चुका है। हमारे देश के दो राष्ट्रीय पर्वों पर भी बस राष्ट्रीयता की खाना–पूर्ति होती है। इसी गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या पर राष्ट्रपति श्री कोविंद जब राष्ट्र को सम्बोधित कर रहे थे और टी.वी. चैनलों पर सम्बोधन का प्रसार हो रहा था तो टी.वी. पट्टी पर रेप, हत्या, लूटपाट, प्रदर्शन और विरोध की झलकियाँ दिखाई जा रही थी।

इस प्रकरण को लेकर चुरू नगर के राष्ट्रीय स्तर के खिलाड़ी और पूर्व कर्मचारी संघ के नेता ठाकुरमल शर्मा ने रोषपूर्ण अपना मत व्यक्त किया कि इतने बड़े देश में घटनाएं, दुर्घटनाएं होती होंगी, मगर कम से कम राष्ट्रीय पर्व और राष्ट्रपति जी के उद्बोधन में इस प्रकार की पट्टी चलाना राष्ट्रीयता का अपमान है।

लफ्फाजी के भाषण वालों पर इस प्रकार के रोष से किसी भी प्रकार का फर्क नहीं पड़ने वाला क्योंकि इन्हें जनता को बेवकूफ बनाने में महारथ हासिल है? दूसरे शब्दों में इनके इशारे पर ही ऐसा सब हो रहा है अन्यथा आधार विवरण की सूचना देने वाली पत्रकार को जब जेल के अन्दर किया जा सकता है तो अन्यों के साथ भी ऐसा हो सकता है?

पाठक ऐसा सोच रहे होंगे कि यह क्या माजरा है अथवा यह क्या अनाप शनाप लिखा जा रहा है, वस्तु स्थिति यह है कि बढ़ती महंगाई और बेरोजगारी पर जब नियंत्रण नहीं किया जा सका तो लव जिहाद, बन्देमातरम, अखलाख, कांग्रेस मुक्त भारत, गाय, हिन्दुत्व, तलाक, पद्मावत, तिरंगा यात्रा आदि पर बहस और जनता का ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है?

नोटबंदी पर कोई बड़ा जन आन्दोलन नहीं हुआ तो नोटबंदी करने वाले ने सोच लिया कि जनता के मुँह में अंगुली फेर ली है। जबकि जहरीला दंश तो क्या बल्कि अंगुली कटने का भी डर नहीं है? दरअसल झूठी बयानबाजी से लोगों को बरगलाया गया कि पूंजीपति और कालेधन वाले शीघ्र ही सड़क पर आ जाएंगे? कमजोर तबके वालों ने सोचा कि समानता का अवसर मिलेगा और इसी मुगालते में वे स्वयं सड़कों पर लाइन में आ गए और एक सौ से ऊपर व्यक्ति लाइन में ही अपनी जान गवां बैठे?

तिकड़मी तबके को इससे (नोट बंदी से) कुछ भी फर्क नहीं पड़ा बल्कि अपनी मिलीभगत की कौशलता से कालेधन को भी सफेद कर बैठे? नोटबंदी की असफलता से देश में क्राँति हो जाती, मगर बेरोजगारों व युवजन तबका मोबाइल और नेट में उलझा रहा? वर्तमान में भी इस स्थिति में बदलाव नहीं आया है।

गंगा के समान पवित्र लोगों ने इसे अपनी विजय समझा जबकि 99 प्रतिशत प्रचलित मुद्रा वापस आ आने से यह गणित साफ हो गया कि ..... गंगा तो मैली ही है?

अपने–अपने राज्यों के क्षत्रप भी मनमर्जी पर उतर आए। तंत्र से परेशान बेचारा गण अभावों और आवश्यकताओं की किससे शिकायत करें? राजस्थान में जयपुर के दैनिक समाचार पत्र ''राजस्थान पत्रिका'' ने एक साहसिक कदम अवश्य उठाया जो सरकार की हठधर्मिता के चलते ''जब तक काला –तब तक काला'' के रूप में पांच महीनों से एक नायाब अभियान चलाए हैं।

फब्ती कसना जुमले गढ़ना
शासक की शातिर स्टाइल है
युवा आन्दोलन न कर बैठे
उन सबकी खातिर मोबाइल है
देश में सबसे बड़ी समस्या
रोटी ना रोजी, पद्मावत है
नोटबंदी फैल रही दिलचस्प
मुद्रा में हाजिर बिटकाइन है।

दिलचस्प
चूरू–331001

****

''बिल गेट्स'' और ''जुकर वर्ग''

यह अद्भुत है कि विश्व में सभी प्रकार की पुस्तकों की बिक्री ज्यादा नहीं होती। प्रकाशकों का मत है कि पाठक अब इन्टरनेट, मोबाईल या लैपटॉप पर अपने पसंदीदा पुस्तकों को पढ़ लेता है। पुस्तक खरीदने में वह पैसे खर्च नहीं करता। अधिकांश पुस्तकालयों में पाठकों की संख्या दिन–प्रतिदिन गिरती जा रही है। परंतु इसके विपरीत विश्व के सबसे धनाढ्य ''बिल गेटस'' ''जुकर वर्ग'' और अन्य धनाढ्यों का मत है कि वह रात्रि में कम से कम एक घंटा किसी भी प्रकार की पुस्तक को पढ़ने में व्यतीत करते हैं।

''बिल गेटस'' के अनुसार उनको जो ज्ञान पढ़ने से मिलता है वह इन्टरनेट पर नहीं। ''बिल गेटस'' का यह भी मत है कि उनके विदेश प्रवास के दौरे में कोई पुस्तक अवश्य उनके साथ होती है। इसीलिए बिल गेटस और जुकर वर्ग विश्व के प्रमुख धनाढय है।

कृष्ण मोहन गोयल
113 बाजारकोट, अमरोहा–244221

डी.ए.वी. सिरसा में विज्ञान, गणित व कला प्रदर्शनी मेला

बच्चों में सिद्धान्तिक व प्रायोगिक ज्ञान को अधिक से अधिक विकसित करने के लिए डी.ए.वी., सैंटेनरी पब्लिक स्कूल के भव्य प्रांगण में विज्ञान, गणित व कला प्रदर्शनी मेला का आयोजन किया गया। जिसके मुख्य अतिथि श्री अजय कुमार शर्मा (एस.एस.पी.) सिरसा ने रिबन काट व दीप प्रज्ज्वलित करके कार्यक्रम का शुभारंभ किया। बच्चों के

द्वारा प्रस्तुत की गई अनेकानेक कलाकृतियों एवं उनके आत्मविश्वास से प्रभावित होकर मुख्यतिथि ने कहा कि आज के बच्चों में विज्ञान और गणित में से कुछ खोजने की जिज्ञासा बढ़ी है।

विद्यालय प्राचार्य श्री उतरेजा ने पी.टी.एम. में आए हुए सभी अभिभावकों से बच्चों में पढ़ाई के प्रति और अधिक रुचि जागृत करने हेतु परिचर्चा की।

मुरलीधर डी.ए.वी. अम्बाला में सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास विवेचन प्रतियोगिता का आयोजन

मुरलीधर डी.ए.वी. सीनियर सेकेंडरी पब्लिक स्कूल में गत वर्ष की भांति इस वर्ष भी ऋषि बोध उत्सव के उपलक्ष्य में सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास विवेचन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में मुख्य अतिथि श्री हरदेव सिंह, चीफ मैनेजर, पी.एन.बी. तथा विशिष्ट अतिथि श्री आर.के. छाबड़ा, मैनेजर पी.एन.बी. ने शिरकत की। प्राचार्य डॉ. आर.आर. सूरी ने बताया कि डी.ए.वी. विद्यालयों में समय–समय पर इस तरह की प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है जो विद्यार्थियों का न केवल मानसिक विकास अपितु नैतिक मूल्यों का विकास भी करती है।

सत्यार्थ प्रकाश सम्मुलास विवेचन प्रतियोगिता के अंतर्गत चौदह समुल्लासों में प्रथम तीन समुल्लासों पर आधारित प्रतियोगिता करवाई गई जिसमें विद्यार्थियों ने एक से बढ़कर एक प्रस्तुति दी। प्रतियोगिता में अम्बाला, साहा, नारायणगढ़ आदि विभिन्न स्थानों के डी.ए.वी. स्कूल प्रतियोगिता *में सम्मिलित हुए। प्रतियोगिता* में कनिष्क तथा वरिष्ठ दोनों वर्ग शामिल हुए। विद्यार्थियों ने कहा कि ईश्वर को सर्वोत्तम नाम ''ओ३म्'' है तथा विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण में माता–पिता तथा अध्यापक की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विद्यार्थियों ने प्राणायाम के लाभ के बारे में सुन्दर भाषण दिया। कनिष्क वर्ग के विजेता रहे। प्रथम पुरस्कार तनिष्का कालरा, मुरलीधर डी.ए.वी. द्वितीय पुरस्कार वंशिका, डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल नारायणगढ़। तृतीय पुरस्कार खुशी, सोहन लाल गर्ल्स सी.सै. स्कूल को दिया गया जबकि सांत्वना पुरस्कार हरलीन कौर डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, मॉडल टाउन को दिया गया। वरिष्ठ वर्ग में प्रथम पुरस्कार पलक डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, शाहाबाद, द्वितीय पुरस्कार सान्या कालरा मुरलीधर डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, अम्बाला शहर को तथा तृतीय पुरस्कार मनिंदर कौर पुलिस डी.ए.वी. गर्ल्स सी.सै. स्कूल को दिया गया। मोहिनी सोहन लाल डी.ए.वी. गर्ल्स सी.सै. स्कूल को सांत्वना पुरस्कार दिया गया।

सभी पुरस्कृत विद्यार्थियों के साथ उनके अध्यापकगण को भी सम्मानित किया गया। प्रतियोगिता में शामिल होने वाले प्रत्येक विद्यार्थी को प्राचार्य डॉ. आर.आर. सूरी ने उपहार दिया। विद्यार्थियों तथा अध्यापकों के लिए जलपान की व्यवस्था की गई। प्रतियोगिता के अंत में मुख्य अतिथि तथा वरिष्ठ अतिथि को प्राचार्य द्वारा स्मृति चिह्न भेंट किया गया।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

हंसराज महिला महाविद्यालय ...

कार्यशाला के प्रथम दिवस मुख्यतिथि एवं प्रमुख वक्ता डॉ. उदयन आर्य ने संस्कृत भाषा के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए भाषा के शुद्ध उच्चारण पर जोर दिया एवं कहा कि खिचड़ी भाषा के प्रयोग से भाषा का महत्त्व कम हो जाता है संस्कृत का पठन–पाठन करने वाला व्यक्ति कभी भी निराशा के भाव से ग्रसित नहीं होता बल्कि उसमें नवीन उर्जा का संचार होता है इसी अवसर पर श्री आदर्श कुमार ने संस्कृत गीत की प्रस्तुति की एवं कहा कि मनुष्य का सबसे बड़ा पतन का कारण आत्मा को अनदेखा करना है। धर्म दिखाने की नहीं बल्कि भीतर की चीज़ है।

अग्रिम दिवसों में भी संस्कृत भाषा के प्रचार व प्रसार पर विस्तृत विचार–विमर्श किया गया। संस्कृत प्राचीनतम भाषा है। आज के युग में यह प्राचीन एवं सभ्यात्मक, सांस्कृतिक भाषा अपना अस्तित्व खोती जा रही है छात्राओं को संस्कृत भाषा के बारे में विस्तृत ज्ञान दिया गया एवं इसे अपने नित्य व्यवहार में अपनाने को कहा गया। दस दिवसीय इस कार्यशाला में छात्राओं ने संस्कृत भाषा के बारे में अप्रतिम ज्ञान प्राप्त किया। संस्कृत में सरल वाक्यों का निर्माण दैनिक प्रयोग में होने वाली वस्तुओं के संस्कृत में नाम, वार, महीनों के नाम, आत्मपरिचय इत्यादि का ज्ञान छात्राओं को दिया गया।

इसी अवसर पर संस्कृत विभागाध्यक्ष श्रीमती सुनीता धवन ने कहा कि इस दस दिवसीय संभाषण कार्यशाला का आयोजन संस्कृत भारती पंजाब प्रांत के सराहनीय सहयोग से सम्पन्न हुआ है इस कार्यशाला में लगभग 35 छात्राओं ने प्रतिभागिता की। इस कार्यशाला का मुख्य उद्देश्य में संस्कृत भाषा के प्रति रूचि को जागृत करना रहा।

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2018-19
Posted at N.D.P.S.O. ON 14/15-02-2018

डी.ए.वी. गुरुग्राम में पूर्ण चन्द्रग्रहण अवलोकन कार्यक्रम

जनवरी मास को साल का पहला चंद्रग्रहण लगा। यह लगभग 150 वर्षों के बाद होने वाला 'सुपर ब्लू ब्लड मून' था, जिसे देखने के लिए सभी लोग उत्सुक थे। विद्यार्थियों को ऐसी ऐतिहासिक खगोलीय घटनाक्रम को नज़दीक से देखने का अनुभव कराने के उद्देश्य से डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल सेक्टर-49, गुरुग्राम में एक समारोह का आयोजन किया गया। विद्यार्थी अपने अभिभावकों के साथ इस अद्भुत खगोलीय घटना का आनंद उठा सकें, इसके लिए विद्यालय के प्रांगण में आठ टेलिस्कोप लगाए गए थे जिसकी सहायता से बच्चों ने यह नजारा देखा। चन्द्रग्रहण का समय लगभग 6.30 से 9.30 तक था। यह ग्रहण इसलिए भी महत्वपूर्ण था क्यों इस दिन चन्द्रमा अपनी परिक्रमा कक्ष पर घूर्णन करते हुए अन्य दिनों की अपेक्षा पृथ्वी के ज्यादा नजदीक था और पूर्णिमा की रात भी थी। इन तीनों संयोगों ने मिलकर इसे एक दुर्लभ चंद्रग्रहण बना दिया।

इस समारोह का आयोजन 'स्पेस इंडिया' नामक संस्था के साथ मिलकर किया गया था। बच्चे इस खगोलीय घटना को देखने

और समझने के लिए बहुत उत्साहित और उत्सुक थे। उनकी इसी उत्सुकता को ध्यान में रखते हुए प्रोजेक्टर के माध्यम से विद्यार्थियों को खगोलशास्त्र की जानकारी प्रदान की गई और चन्द्र ग्रहण के कारण, प्रभाव तथा उससे जुड़े मिथकों के बारे में विस्तारपूर्वक बताया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित ब्लॉक शिक्षा अधिकारी कैप्टन इंदु बोकन तथा जॉय ऑफ लर्निंग की फाउंडर डायरेक्टर श्रीमती अंशुमाला गुप्ता ने भी विद्यार्थियों को संबोधित कर चन्द्रग्रहण से संबंधित कई जानकारियाँ सांझा की। विद्यालय की मुख्याध्यापिका ने मुख्य अतिथियों को नई पौध भेंट स्वरूप देते हुए उन्हें सम्मानित किया और अपने प्रेरक वचनों द्वारा समारोह में उपस्थित सभी लागों का स्वागत करते हुए इस कार्यक्रम का शुभारंभ किया।

समारोह में लगभग 800 विद्यार्थी अपने अभिभावकों के साथ इस दुर्लभ दृश्य को देखने के लिए आए थे। विद्यार्थियों के लिए कुछ गतिविधियों का आयोजन भी किया गया था ताकि मनोरंजन के साथ-साथ उनका ज्ञानवर्धन भी हो। इन गतिविधियों के द्वारा बच्चों को तकनीक के माध्यम से विभिन्न ग्रहों पर वज़न और द्रव्यमान संबंधित जानकारियाँ दी गईं, थ्री-डी ग्लास के द्वारा तारामंडलीय गतिविधियों का आनंद प्राप्त किया, प्रश्नोत्तरी गतिविधि के द्वारा बच्चों से विज्ञान से संबंधित प्रश्न पूछे गए तथा अंतरिक्ष यात्री के स्वरूप में अपने आप को देखने की कल्पना को मूर्त रूप देते हुए उन्होंने 'एस्ट्रोनॉट सूट' के साथ फोटो खिंचवाकर इस अवसर पर भरपूर आनंद उठाया। ग्रहण के समय कुछ खानी नहीं चाहिए, इस मिथक का खंडन करने के लिए 'चाँद का लंगर' की व्यवस्था की गई थी। विद्यार्थियों, अभिभावकों तथा शिक्षकों सहित वहाँ उपस्थित सभी लोग इस शीतल व अद्भुत संध्या में खुले आसमान के नीचे चाय की चुस्कियों के साथ पकौड़े खाते हुए चन्द्रग्रहण के इस दुर्लभ दृश्य का अवलोकन कर आनंद से सराबोर हो उठे।

आध्यात्मिक गोष्ठी का सफल आयोजन

आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग व आशीर्वाद सीनियर सीटिजन आश्रम के सौजन्य से एक आध्यात्मिक गोष्ठी का आयोजन 30 जनवरी प्रातः 11.30 बजे से 1 बजे तक आश्रम के परिसर में किया गया।

''आशीर्वाद'' वृद्धाश्रम नई दिल्ली नगर पालिका की ओर से एक बहुत ही सुविधाजनक, वातानुकूलित समृद्ध आश्रम है। कई महानुभाव व बहनें, हर सप्ताह आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग व हवन में बहुत प्रसन्नता से भाग लेते रहते हैं। कुछ सदस्य अधिक आयु के होने से मन्दिर में आने में असमर्थ हैं, इसलिए उन्होंने आदरणीय मंत्री जी व सहमंत्री जी से अनुरोध किया कि यदि समय-समय पर आश्रम में ही आध्यात्मिक गोष्ठियों का आयोजन हो सके

तो सभी सदस्य लाभान्वित हो सकेंगे।

गोष्ठी में सबसे पहले दरबारी लाल डी.ए.वी. विद्यालय को पाँच छात्राओं व उनकी संगीत शिक्षिका ने पाँच सुमधुर भजनों से सबका हृदय मोह लिया।

तत्पश्चात श्रीमति ऊषा पोपली (रिटायर्ड इंजीनियरिंग कॉलेज) ने जीवन जीने की कला पर प्रवचन दिया। उन्होंने सदा पोजिटिव रहते हुए प्रभु की रजा में रहने के लिए सबके प्रेरित किया तथा गुरुमंत्र गायत्री मंत्र को विस्तार से समझाया। आश्रम की मैनेजर श्रीमती ममता जी ने सबका स्वागत किया व सबकी बैठने की बहुत ही अच्छी व्यवस्था की। कांता बहन जो कि आश्रम की एक बहुत ही कुशल सदस्या हैं उन्होंने सभी के लिए चाय-पानी व प्रसाद की व्यवस्था की।

अंत में शांति पाठ के साथ गोष्ठी का समापन हुआ। आश्रम के सभी सदस्यों ने कार्यक्रम की भूरि-भूरि प्रशंसा की तथा अनुरोध किया कि भविष्य में इस तरह से कार्यक्रम जल्दी करवाते रहें।

कार्यक्रम में बि.ए. के अदलखा डा. इला आनन्द, श्रीमती स्नेह मोहन, श्रीमती विमला बब्बर, डा. अंशु असरी, श्री राजकुमार, कर्नल साहब तथा आश्रम के 20 सदस्यों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया।

डी.ए.वी. बहादुरगढ़ में गणतंत्र दिवस समारोह का आयोजन

डी.ए.वी. सेन्टनरी पब्लिक स्कूल सैक्टर-6 बहादुरगढ़ (हरियाणा) में 69वें गणतंत्र दिवस समारोह का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का आरंभ ध्वजारोहण से किया गया। इस अवसर पर मुख्यतिथि श्री के.एल. खुराना श्री सतपाल आर्य (मंत्री) श्री देशराज सिद्धांताचार्य विद्यालय के प्रधानाचार्य ने अतिथियों का स्वागत अंग-वस्त्र व पुष्प भेंट में देकर किया। तत्पश्चात विद्यार्थियों ने देशभक्ति व सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये। इन सांस्कृतिक कार्यक्रमों में नन्हें-मुन्हें बच्चों द्वारा नृत्य-नाटिका प्रस्तुत की गई जिसे देखकर सभी का मन खुशी से झूम उठा।

विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत किये गए रंगारंग सांस्कृतिक, देशभक्ति गीत, नाटक व नृत्य ने सभी अतिथियों का ध्यान अपनी ओर खींच लिया। विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत किए गए नाटक में सभी विद्यार्थियों के मन में देश के

प्रति सम्मान गौरव के भाव जागृत कर दिए। मुख्यतिथि श्री के.एल. खुराना ने विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करते हुए कहा कि विद्यालय दिन-प्रतिदिन उन्नति के पथ पर बढ़ रहा है। आज देश को ऐस नागरिकों की आवश्यकता है जो देशभक्ति की भावना से प्रेरित हों। डी.ए.वी. विद्यालय राष्ट्र निर्माण में अपनी उत्कृष्ट भूमिका निभा रहा है। यह विद्यालय प्रगति के पथ पर और आगे बढ़ेगा क्योंकि यहाँ के विद्यार्थियों का बौद्धिक व सांस्कृतिक विकास विशेष रूप से किया जा रहा है।

राष्ट्रीय स्तर पर खेलों में पुरस्कृत विद्यार्थियों को स्मृति चिन्ह देकर सम्मानित किया गया उनके नाम इस प्रकार हैं-आशीष, आकाश, राजकुमार, साक्षी दुआ, अमित दहिया आदि।

विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री राजदीप कुलश्रेष्ठ ने अपने वक्तव्य में सभी का धन्यवाद देते हुए कहा कि हम सभी ने समाज कल्याण व समर्पण की भावन होनी चाहिए। हमें अपने बड़े-बुजर्गों का सम्मान करना चाहिए यहीं हमारी संस्कृति है। यदि हम अपना विकास चाहते हैं तो हमें अपनी संस्कृति का विकास करना होगा तभी उत्तम राष्ट्र की संकल्पना पूरी होगी।

अंत में डी.ए.वी. गान के साथ समारोह का समापन हुआ। डी.ए.वी. गान की धुन में सारा विद्यालय गूँज उठा।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.-9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**